वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदी जी गुरुदेव के जीवन पर आधारित

मेरा लक्ष्य, साधना एवं अनुभव

-: लेखक :-
वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदी जी गुरुदेव

प्रकाशक
धर्म दर्शन विज्ञान शोध संस्थान (बडौत)
धर्म दर्शन सेवा संस्थान (उदयपुर)

मुद्रक :
जैन प्रिन्टर्स, उदयपुर

वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदी जी गुरुदेव के जीवन पर आधारित

मेरा लक्ष्य, साधना एवं अनुभव

ग्रंथाङ्क - 150
लेखक -वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदी जी गुरुदेव
संस्करण - प्रथम - 2005
प्रतियाँ - 2000
मूल्य - 15.00/- रुपये
द्रव्यदाता / ज्ञानदाता
१) श्रीमती राजेश्वरी w/oधर्मपाल कुमार जी जैन,आरा,(बिहार)
२) श्रीमती सुगम w/o रवीन्द्र कुमार जी जैन, टिकैतनगर (उ.प्र.)
३)श्रीमती सुलभ w/o मनोज कुमार जी जैन, बहराइच (उ.प्र.)
४) श्रीमती सुयश w/o कुमार अपूर्व जैन, आरा (बिहार)
५)श्रीमती मैना w/o मन्नालाल जी भोरावत, उदयपुर (राज.)

आचार्य श्री कनकनंदी जी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

1) **पूर्व नाम** - गंगाधर प्रधान
2) **जन्म स्थल** - उत्कल (ब्रह्मपुरी), **जन्म वर्ष** - 1954
3) **माता-पिता**-श्रीमती रूकमणिदेवी, श्री मोहनचन्द धान
4) **लौकिक शिक्षा** - उच्च शिक्षा
5) **क्षुल्लक दीक्षा** - अतिशय क्षेत्र पपौराजी (टिकमगढ) मध्यप्रदेश (सन्-1978)
6) **मुनि दीक्षा** - 5 फरवरी 1981 (श्रवणबेलगोल (कर्णाटक)
7) **दीक्षा प्रदाता गुरू** -पूज्य गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी
8) **शिक्षाप्रदात्री प्रमुख गुरू** -पू. ग. विजयामति माताजी
9) **उपाध्याय पद** -25 नवम्बर 1982 हासन (कर्णाटक)
10) **आचार्य पदवी :**- 23 अप्रेल 1996 उदयपुर (राज.)
11) **प्रशिक्षित सुयोग्य शिष्य समूह** :- पू. आ. पद्मनन्दी आ. देवनन्दी, आ. कल्प श्रुतनन्दी, आ. करूणानन्दी,

आ.कुशाग्रनंदी, आ. गुप्तिनंदी, उपाध्याय विद्यानंदी, उपा. कनकोज्ज्वलनंदी (श्रुतसागर), मु. आज्ञासागर, मु. तीर्थनंदी (इत्यादि शताधिक मुनि आर्यिका वर्ग)
12) **प्रमुख संगठन** :- 1) धर्म दर्शन विज्ञान शोध संस्थान 2) धर्म दर्शन सेवा संस्थान (देश-विदेश में शाखा)
13) **प्रख्याति** :- प्रखर प्रज्ञाधनी, कुशल संघ शासक, समीक्षात्मक साहित्य सृजेता, वैज्ञानिक-व्याख्याता, मार्मिक प्रवचन एवं अनुशासन प्रिय, जैन-जैनेतर बच्चों, किशोर-किशोरियों, युवक-युवतियों के प्रशिक्षण दाता, बच्चे जिनको प्रिय तथा उनसे आहार लेने वाले, जैन-जैनेतर प्रबुद्ध वर्ग के लिए आदर्श ज्ञानी साधक। चंदा-चिट्ठा तथा सामाजिक द्वन्द्व-फंद से दूर, शांत-समता, निष्पृह-निराडम्बर साधक।
14) **सक्रिय गति विधियाँ** :- साहित्य सृजन, श्रमण संघों का अध्यापन, प्रशिक्षण शिविर, राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठी, स्व-शिष्य एवं इन्टरनेट के माध्यम से धर्मदर्शन विज्ञान का प्रचार-प्रसार, निस्वार्थ रूप से विभिन्न क्षेत्रों में कार्यरत जैन-अजैन समाज सेवकों/

संस्थान/संगठनों को उपाधि प्रदान।

15) **कीर्तिमान** :- प्राचीन भारतीय दर्शन व साहित्य के आधार पर वैज्ञानिक तथ्यों की गुण-दोषात्मक समीक्षा/विश्लेषण।

16) **साहित्य क्रांति** :- अद्यावधि विभिन्न भाषाओं में तीन लाख प्रतियों का प्रकाशन। अनेक जैन-जैनेतर पत्र-पत्रिकाओं में शताधिक शोधपूर्ण लेखों का प्रकाशन।

17) **दीक्षा का उद्देश्य** :- सत्य का शोध-बोध, समत्व की सिद्धि, समाज को दिशा बोध, सुख की सर्वोपलब्धि। धार्मिक, सामाजिक, व्यापारिक, राजनैतिक, शैक्षणिक भ्रष्टाचार से विक्षुब्ध तथा उनके परिशोधन की भावना।

18) **वर्षायोग** :- सम्मेद शिखर, चम्पापुरी, आरा (बिहार), सोनागिरी, शहगढ (म.प्र), अकलुज (महाराष्ट्र), हासन, तुमकुर, बेलगांव, शमनेवाडी, शेडवाल (कर्नाटक), अकलुज (महाराष्ट्र), आरा (बिहार), बडौत, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.), रोहतक (हरियाणा), निवाई, लावा, बिजौलियाँ, कोटा, केशरियाजी, सागवाडा, सलुम्बर, झाडौल, आयड, गींगला, प्रतापगढ, मुंगाणा, गनोडा, उदयपुर शहर (राजस्थान)

19) **बाल्यकाल से भावित आजीवन व्रत** :- 1) जीवन भर बालक (ब्रह्मचारी, सीधा-सरल-सहज) रहना। 2) आजीवन विद्यार्थी (सतत्-अध्ययन, शोधरत रहना)।

20) **विद्यार्थी जीवन से भावित उद्देश्य** :- 1) सच्चा - निस्वार्थ जनसेवक राष्ट्रीय या अंतर्राष्ट्रीय नेता बनना या 2) वैज्ञानिक बनना या 3) सच्चा आदर्श - आध्यात्मिक, वैज्ञानिक, क्रातिकारी साधु बनना।

21) **वर्तमान जीवन के लक्ष्य** :- 1) सत्य की उपलब्धि, देश-विदेश में प्रचार-प्रसार 2) समता की साधना एवं प्राप्ति तथा प्रचार-प्रसार 3) असत्य, अन्याय, रुढि, आडम्बर, मिथ्या परम्परा, अंधविश्वास, विषमता, पक्षपात, गूटबाजी, फूट, भ्रष्टाचार, अनैतिक, अकर्मण्य, उत्शृंखल/अनुशासन हीनता, शोषण का निर्मम परिशोधन।

22) **प्रिय एवं श्रेय** :- सत्य, समता, सुख, विज्ञान, गणित, दर्शन, तर्क, नवीन शोध, समीक्षा, बच्चे, स्कूल-कॉलेज में प्रवचन एवं प्रशिक्षण, ग्राम, प्राकृतिक, स्वच्छ, हवादार वातावरण-आहार (ठंडा, मधुर, उत्तम भोजन,

थंडा जल-दूध, घी, फल, हरी सब्जी, सूखा मेवा तथा मनुक्का, थंडाई आदि), सुख विहार-विचार, भोले भाले लोग, बच्चों से आहर लेना उनसे काम करवाना, उनसे बोलना, स्वच्छता, पवित्रता, शुद्धता, पक्षपात रहित-सर्वजीव हितकारी-सुखकारी-धर्म-नीति, व्यवस्था, कानून, राजनीति, अर्थनीति, शोषण विहिन समाज, परोपकार, सेवा, आदर, कोमल-निश्चल-निस्वार्थ-सहृदयता।

23) **तकलिफ** :- अधिक अध्ययन-अध्यापन, लेखनादि के कारण एवं विश्राम की कमी से तथा 14-15 वर्ष तक अधिक अन्तराय से आम्लपित्त, शारीरिक उष्णता से शारीरिक दाह, भोजन के समय शारीर में जलन, भोजन में खट्टा, गरम, रुखा-सुखा, अध-कच्चा, अध-पक्का, जला हुआ भोजन, मिर्ची से तथा बदबु, धुँआ, गन्दगी, प्रदूषण से दाह, वमन, चक्कर, मूर्छा, हैजा, पीलिया, खाँसी आदि रोग की तकलिफ।

उपाध्याय विद्यानंदी

मेरा लक्ष्य, साधना एवं अनुभव

अनेक वर्षों से अनेकों ने विशेषत: जो मेरे पास अध्ययन करते हैं या मेरे साहित्यों का अध्ययन करते हैं ऐसे स्व-पर संघ के साधु संत, ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणी, शिविर के विद्यार्थी तथा विद्वान्, प्रोफेसर्स, वैज्ञानिक आदि का आग्रह रहा है कि गुरुदेव ! आप कृपया आपकी जीवनी हमें बताये जिससे हमें प्रेरणा मिलेगी । परंतु यह सब मेरे से संभव नहीं होने के कारण उनका पुन: आग्रह रहा कि आप अवश्य अपनी प्रेरणादायी जीवनी लिखें जिससे हमें प्रेरणा मिलें तथा दूसरें लाभान्वित होवे। मैं यह सब नहीं चाहने के कारण मैं मेरी जन्मजयंती, दीक्षा जयंती, आचार्य जयंती आदि न मनाता हूँ न मनवाने देता हूँ यहाँ तक कि हमारे मूल बडा संघ (आ. कुंथुसागर जी ससंघ) में भी किसी की भी जन्मजयंती आदि मनाने नहीं देता था यहाँ तक कि मैं अपने लेख, साहित्य, शिविर, संगोष्ठी, संस्था आदि का नामकरण मेरे नाम पर नहीं करता हूँ भले इसके लिए दूसरों का कितना भी आग्रह क्यों न होता हो। यहाँ तक कि पहले-पहले 1983 तक मेरे लेख एवं साहित्य में मैं मेरा नाम नहीं देता था। परंतु दूसरे की अप्रमाणिकता तथा आ. कुंथुसागर गुरूदेव की आज्ञा से लेख आदि में नाम देने लगा। वह भी पहले तो आचार्य श्री स्वयं मेरा नाम लेख

आदि में लिखते थे। 1993 तक मैं मेरा फोटो भी खिचवाने नहीं देता था। तथा पुस्तक आदि में नहीं देता था क्योंकि नाम, प्रसिद्धि, ख्याति-पूजा आदि का लक्ष्य मेरा बाल्यकाल से ही नहीं रहा है तथापि दूसरों के बार-बार जिज्ञासापूर्ण सनम्र आग्रह से कुछ लिखने के लिए प्रेरित हुआ हूँ। दूसरों के आग्रह, आवश्यकता, उपयोगिता, जानकारी, प्रभावना, प्रचार -प्रसार के लिए जीवनी, फोटो, संस्था परिचय, कार्यक्रम, आदि का प्रकाशन कर रहा हूँ । इसके पूर्व मैंने विद्यार्थियों के हितार्थ मेरे विद्यार्थी जीवन के बारे में लिखा था जो कि ''धर्म दर्शन विज्ञान प्रवेशिका'' पुष्प तृतीय में तथा 'सेवा संदीपनी' नारायण सेवा संस्थान की पत्रिका में प्रकाशित हुआ हैं । संघस्थ उपाध्याय विद्या नन्दी द्वारा लिखित ''सत्यानवेषी आ. कनकन्दीजी का व्यक्तिव -कृत्तित्व'' भी प्रकाशित हुआ है । इस लेख में मैं विशेषत: ' मेरा लक्ष्य, साधना एवं अनुभव' के बारे में स्व-पर हितार्थ के लिए किंचित् प्रकाश डालुँगा। भविष्य में मेरे अनुभवों के बारे में विस्तृत प्रकाश डालने का विचार है।

1) मेरा लक्ष्य सत्य-ज्ञान एवं स्व-पर शांति - मुख्यत: पूर्व संस्कार के कारण मैं शिशु अवस्था से ही सत्य जिज्ञासु रहा हूँ । मैं कौन? संसार क्या? भगवान् का स्वरूप क्या? संसार में प्राणी दुखी

क्यों? मनुष्य अन्याय ,अत्याचार क्यों करता है? दूसरों को दुख क्यों देता है आदि के बारे में जिज्ञासा होने लगी थी। इसे जानने के लिए देश-विदेश के धर्म, दर्शन, तर्क, पुराण, सिद्धान्त, आदि का अध्ययन करने लगा। तीसरी और चौथी कक्षा से ही कोर्स की पुस्तकों के साथ- साथ उपर्युक्त साहित्यों का अध्ययन करना उस संबंधी चर्चा, जिज्ञासा मनन, चिंतन, शास्त्र प्रवचन, श्रवण, तर्क-वितर्क करने लगा था । मेरी बुद्धि-लब्धि अच्छी होने के कारण मुझे कोर्स की पुस्तकें ज्यादा नहीं पढना पडता था तथापि मैं विभाग, कक्षा, विद्यालय में सर्वोत्तम आता था तथा दूसरे बच्चों को नि:शुल्क ट्यूशन पढाता था, कक्षा में भी शिक्षकों के आदेश के अनुसार पढाता था। इतना ही नहीं आवश्यकतानुसार माता-पिता, पशु-पक्षी, रोगी, गरीब, अनाथ, असहाय आदि की सेवा, सहयोग करता था। योग्य सामाजिक, धार्मिक, राष्ट्रीय कार्यक्रमों में भाग लेता था, सहयोग करता था परंतु शादी विवाह, मृत्यु भोज, सामाजिक, धार्मिक कुरीतियाँ, लडाई-झगडे आदि में भाग नहीं लेता था अपरंच उसके संशोधन के लिए बोलता था, करता था। मेरा लक्ष्य विद्यार्थी जीवन से ही सत्य-ज्ञान-स्व-पर सुख होने के कारण मैं मानव एवं प्राणी मात्र की सेवा करने के लिए राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय नेता, वैज्ञानिक या

सच्चा स्व-पर हितकारक साधु बनना चाहता था। उपर्युक्त लक्ष्यानुसार अध्ययन एवं प्रायोगीकरण भी करता आ रहा हूँ । विभिन्न धर्म के (जैन, हिन्दू, बौद्ध) के तीर्थ स्थल, ऐतिहासिक स्थल, पर्यटन स्थल, नदी, पर्वत, संग्रहालय, ग्रंथालय, चिडियाघरों में भ्रमण/परीक्षण-निरीक्षण/अध्ययन आदि के कारण भी कोर्स की पुस्तकें कम बार पढने पर भी समझने में आ जाती थी ,याद रहती थी और ट्यूशन, नकल के बिना भी अच्छे स्थान आते थे। कुछ विषयों में तो उच्च कक्षा के विद्यार्थियों से भी मेरा ज्ञान अच्छा था और उस विषय को उच्च कक्षा के विद्यार्थियों को समझा देता था। तथापि मेरा लक्ष्य नौकरी करना, विवाह करना, नाम कमाना नहीं रहा। **मेरी बाल्यकाल से प्रतिज्ञा रही है-1) मैं जीवनभर बालक (सहज-सरल) रहूँगा 2) जीवनभर विद्यार्थी (सत्य जिज्ञासु, अध्ययनशील) रहूँगा।** मैं विद्यार्थी जीवन से तार्किक, प्रगतिशील, वैज्ञानिक, गाणितीय बुद्धि संपन्न, हिताहित विवेक से संपन्न, सरल-सहज, शालीन, शांतप्रिय, एकांत सेवी, मौनवृती, अध्ययनशील, नवीन-नवीन विचारशील, संवेदनशील, दयालु, परोपकारी, ईमानदार, परदु:ख कातर, परहित चिंतक, राष्ट्र प्रेमी, कर्त्तव्यनिष्ठ, अनुशासनप्रिय, सादा जीवन उच्च विचार वाला, किसी का कभी अंधानुकरण न करने

वाला, सहृदयी, प्रखर प्रज्ञावान्, दृढ निश्चयी, सत्य, न्याय का पक्षधर, गुणग्राही, सत्साहसी, समयानुबद्ध, दूसरों की बातों में नहीं फँसने वाला होते हुए भी सत्यांश को स्वीकारने वाला हूँ। इन सब कारणों के कारण दूसरों के दु:खों से दु:खी हो जाता हूँ । विशेषत: जब कोई निर्दोष प्राणियों को कष्ट पहुँचाता है, सत्य एवं न्याय के विरुद्ध बोलता है, लिखता है, काम करता है तब मुझे बहुत ही दु:ख होता है । इन सब कारणों के कारण मैं विद्यार्थी जीवन से लेकर ब्रह्मचारी अवस्था तक घंटों-घंटों तक रोता रहा हूँ । समाज, राष्ट्र, राजनीति, व्यापार, नौकरी आदि में भ्रष्टाचार होने के कारण तथा आध्यात्मिक -वैज्ञानिक धर्म से जो मेरा लक्ष्य ''सत्य ज्ञान एवं स्व-पर शांति'' है उसकी सिद्धि संभव होने से मैं साधु बना हूँ ।

2) सत्यग्राही, सत्साहसी, युग के आगे- उपर्युक्त गुणों के साथ -साथ सत्य को स्वीकार करने का, उसे प्रगट करने का, लिखने का मेरे अंदर अदम्य सत्साहस है। इतना ही नहीं स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय के साहित्य, धार्मिक, ऐतिहासिक, कानूनी, राजनैतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक परंपरादि में या उसके सिद्धान्त या क्षेत्र में जो कुछ कमियाँ, गलतियाँ, भ्रान्तियाँ हैं वे सब मुझे शीघ्रता से समझ में आ जाती हैं और उसे संशोधन करने के लिए मैं यथा

योग्य सनम्रता से, अनुशासनबद्धता से दूर करने के लिए बाल्यकाल से ही प्रयासरत हूँ । मैं स्वयं किसी भी प्रकार की मिथ्या परम्परा, अन्धविश्वास, अतिवाद, भ्रान्तियों को न स्वीकार करता हूँ और न नकारने में संकोच या भय करता हूँ। मैं बाल्यकाल से ही मृत्यु भोज, बाल विवाह, हिंसा, भ्रष्टाचार, मिलावट, अन्याय, अत्याचार, अन्धा कानून, भ्रष्ट राजनीति, भेद-भाव, संकीर्ण मतवाद, रुढीवादिता, पाश्चात्य अन्धानुकरण, आधुनिकता के नाम पर स्वच्छन्दता, अश्लीलता-फूहडपना, फैशन-व्यसन, मादक वस्तुओं का प्रयोग, फास्ट-फुड, रेडीमेड भोजन आदि को न स्वीकार करता हूँ और न सही मानता हूँ। इतना ही नहीं बडे-बडे चिंतक, दार्शनिक, लेखक, क्रांतिकारी, राजनेता, यहाँ तक कि वैज्ञानिकों के सिद्धान्तों को भी अन्धभक्त रूप में स्वीकार नहीं करता हूँ। इनसे भी कुछ क्षेत्र में अधिक प्रगतिशील आगे के विचार, चिंतन, सिद्धान्त के बारे में सोचता हूँ, बोलता हूँ एवं लिखता हूँ। उपर्युक्त विषयों को मैं प्राय: 25 वर्षों से मेरे 1) विश्व विज्ञान रहस्य 2) धर्म दर्शन एवं विज्ञान 3) विश्व द्रव्य विज्ञान 4) ब्रह्माण्डीय जैविक, भौतिक एवं रसायनिक विज्ञान 5) अनन्त शक्ति सम्पन्न परमाणु से लेकर परमात्मा 6) वैज्ञानिक आईन्स्टीन के सिद्धान्तों को पुन: परीक्षण की आवश्यकता

7) ब्रह्माण्ड एवं प्रति ब्रह्माण्ड : धार्मिक एवं वैज्ञानिक विश्लेषण 8) अतिमानवीय शक्ति 9) स्वप्न विज्ञान 10) स्वतंत्रता के सूत्र 11) सत्य साम्य सुखामृतम् 12) भविष्य फल विज्ञान आदि 150 ग्रंथों में मैंने लिखा है और अभी भी सतत् लिख रहा हूँ। शिविर, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, धार्मिक प्रवचन, सार्वजनिक प्रवचन, स्कूल, कॉलेज आदि में प्रवचन, शिविर, वाक्‌पीठ सम्मेलन आदि में उपर्युक्त विषयों को बताता हूँ।इतना ही नहीं राज्य से लेकर केन्द्रीय शिक्षा अनुसंधान केंद्र के निर्देशक, कार्यकर्ताओं को साक्षात् या पत्र के माध्यम से बताता हूँ। राज्य सरकार से लेकर केन्द्र सरकार एवं हाईकोर्ट से लेकर सुप्रीमकोर्ट में भी जो दोष कमियाँ एवं भ्रष्टाचार है उसे भी दूर करने के लिए लिखता, बोलता, रिपोर्ट भेजता हूँ, लोकहित याचिका भेजता हूँ। उपर्युक्त कार्यो में मुझे बहुत ही सफलता मिल रही है और उसके लिए विभिन्न प्रबुद्ध जन एवं संगठन भी सहयोग कर रहे हैं।

कुछ लोग आउट ऑफ डेट (पिछडे) तो कुछ लोग अप टू डेट (अद्यतन, आधुनिक) होते हैं परंतु मैं न आउट ऑफ डेट हूँ न अप टू डेट हूँ। मैं बाल्यकाल से ही फॉरवर्ड द एरा/एज/डेट रहा हूँ। अर्थात् मैं आधुनिक विचार, परम्परा, ज्ञान-विज्ञान से भी आगे सोचता हूँ। विद्यार्थी अवस्था में प्रत्येक विषयों को जानने के लिए

विभिन्न प्रश्न करने के कारण मेरे एक शिक्षक मुझे ‘ब्रह्मा’ (नवीन प्रश्नकर्ता/सृष्टिकर्ता) बोलते थे।

कुछ प्रायोगिक संक्षिप्त घटनायें - मेरे ग्रहस्थ जीवन के परिवार की एक जमीन थी जिसको सरकार कब्जे में लेना चाहती थी। उसके लिए कोर्ट का नोटिस आया। हमारे परिवार के लोग घबरा गये। मैं उस समय केवल पाँचवी या छठी कक्षा का विद्यार्थी था। मैं निडर होकर साहस-पूर्वक परिवार को बताया कि इस नोटिस के अनुसार आप कोर्ट मत जाना। पुन: कुछ दिन के बाद एक कर्मचारी कोर्ट से नोटिस लेकर आया। मैं दृढता पूर्वक उस कर्मचारी को बोला, यह जमीन पूर्व से हमारी है और इसके ऊपर हमारा अधिकार है, इसलिए ना हम कोर्ट जायेंगे न किसी प्रकार से कोर्ट के आदेश का पालन करेंगे। उसे विभिन्न दृष्टिकोण से, दृढता से समझाया जिससे वह केस डिसमिस हो गया। दूसरी घटना तब की है जब मैं आठवी कक्षा का विद्यार्थी था। दो भाईयों में लडाई होते हुए मैंने देखी थी। कुछ दिनों के बाद जब मैं स्कूल से वापस आ रहा था तो मैंने देखा कि कुछ पुलिस वाले सुपरिटेंडेन्ट के साथ बैठकर दोनों भाईयों को पूछ रहे थे और कुछ लोग वहाँ इकट्ठे हुए थे। मैं स्कूल बैग रखकर के उस स्थान पर आकर कुछ समय तक सुनता रहा, फिर दृढता से पुलिस

सुपरिटेंडेन्ट को मैंने पूछा कि क्या आप इस घटना को प्रत्यक्ष जानते हो ? जिसे आप निर्दोष मानकर और जिसका रुपया लेकर जिसका पक्ष ले रहे हो वस्तुत: वह दोषी है और दूसरा निर्दोष है। परंतु दूसरा निर्दोष व्यक्ति दुर्बल, गरीब और भोला होने के कारण उसे फटकार लगा रहे हो और दण्डित करना चाहते हो। मैं स्वयं इस घटना का साक्षी हूँ। जब तक आप इस केस को यही डिसमिस नहीं करेगे तब तक आपको यहाँ से जाने नहीं दिया जायेगा और आपके विरुद्ध हम सब लडेंगे। मैंने प्राय: 10-15 मिनिट तक उन्हें दृढता से समझाया जिसके कारण उस केस को भी तत्काल मेरे सामने ही डिसमिस किया गया और एफ.आय.आर. को वही फाडकर फेंक दिया गया। मैं जब नवीं और दसवीं कक्षा का विद्यार्थी था तब हमारे क्षेत्र के विधायक हमारे क्षेत्र के समुचित व्यवस्था नहीं करने के कारण मैंने अकेले ही उनके घर जाकर उनको समस्या के बारे में बताया। मैं जब ग्यारहवीं कक्षा का विद्यार्थी था तब ग्रीष्मावकाश में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के एक विशाल जिला स्तरीय शिविर में भाग लिया था क्योंकि मेरे अंदर बाल्यकाल से ही राष्ट्रीयता, राष्ट्रीय गौरव, संस्कृति प्रेम, देश सेवा का भाव रहा है। मैंने एक दिन शिविर में संघ की एक पत्रिका में बीडी का विज्ञापन देखा। मैंने वहाँ के प्रचारकों से पूछा-संघ की

पत्रिका में यह विज्ञापन क्यों हैं? तब उन्होंने बताया की संघ कार्य के लिए धन की आवश्यकता होती है, उस धन के लिए यह विज्ञापन है। तब मैं बोला - यदि ऐसे है तो संघ के जो उद्देश्य, राष्ट्रीयता, सदाचार, सत्संस्कार, व्यसन मुक्ति आदि है उससे यह कार्य विपरीत है और अशोभनीय है। उन्होंने बताया आप इसे संघ के अन्य उच्च पदाधिकारी, सर संघ संचालक आदि से पूछना। संघ के जितने भी बडे कार्यकर्ता मुझे मिले मैंने उनसे इस बारे में चर्चा की और इसे अयोग्य सिद्ध किया।

मैं विभिन्न विषयों को जानने के लिए एवं शंका समाधान करने के लिए धार्मिक, समाजिक, राजनैतिक, राष्ट्रीय चिंतक एवं लेखकों के सम्पर्क में भी आया। उनसे सत्यासत्य के परिज्ञान के लिए जिज्ञासाएँ भी की। मैं जब आठवीं कक्षा में था मेरे एक सहपाठी के दादाजी जो एक लेखक थे, उनकी एक किताब मैंने पढी। उसमें मैंने एक वर्णन पढा जिसके सत्यतथ्य को जानने के लिए मैंने सहपाढी को पूछा- मेरा सहपाढी कुछ उत्तर नहीं दे पाया और मुझे अपने दादाजी के पास ले गया। मैं विद्यार्थी जीवन से ही सत्याग्राही, सत्साहसी होते हुए भी विनम्र रहा हूँ। उन्हें आदर से प्रणाम करके मैंने पूछा - लेखक महाशय ! आपने जो लिखा एक भक्त की भक्ति से

प्रभावित होकर पाषाण की मूर्ति बोलती थी-खाती थी, क्या आपने यह देखा? और क्या आप यह साबित कर सकते हैं ? लेखक कोई विशेष समर्पित उत्तर नहीं दे पाये। सर्वोदयी नेता लोकनायक जयप्रकाश नारायण से भेट करने के लिए एवं उनसे चर्चा करने के लिए जब मैं कलकत्ता गया तब मैं सरकार एवं कानून के विरुद्ध में 21 पाँइन्ट पॉम्पलेट में छपाकर कलकत्ता में बाँटा था। उसमें से कुछ पाँइन्ट निम्नलिखित थे - 1) कानून को केवल परसाक्षी से न्याय/ निर्णय नहीं देना चाहिए। विशेष केस के लिए घटनास्थल पर स्वयं जज को जाकर परीक्षण, निरीक्षण करके निर्णय देना चाहिए। 2) लोक अदालत होना चाहिए जिससे गरीबों को अदालत का चक्कर लगाना नहीं पडे और उन्हें पुलिस की यातनाएँ सहना नहीं पडे। 3) भ्रष्ट नेताओं, मंत्री, सांसदों, विधायकों को पाँच वर्ष के मध्य में भी सत्ताच्युत करना चाहिए आदि आदि।

मैं अनेक धार्मिक पण्डित, पुरोहित, साधु-संत, आचार्यों को धार्मिक हिंसा, आडम्बर, अंधविश्वास, भेद-भाव के बारे में पुछता था और उन्हें यह बताता था यह सब अयोग्य है, अकरणीय है और अभी भी यह क्रम जारी है। इसी प्रकार समाज में, जाति में, ग्राम में, नगर में जो भेद-भाव, पार्टी बाजी, फूट आदि करते हैं उसे

भी नकारता था और आज भी नकार रहा हूँ। हमारा ग्राम किसी कारण से दो पार्टी (दो विरोधी गुट) में विभक्त हो गया था। हमारा परिवार बडे गुट में था और छोटे गुट के मुखिया के लडके से मैंने मित्रता की। एक मित्र तो मेरा पहले से ही छोटे गुट का था। दोनों गुट के व्यक्ति एक दूसरे के घर पर आना-जाना, लेन-देन बंद कर दिये थे। यह सब मुझे अच्छा नहीं लगा। उस समय मैं चौथी-पांचवीं कक्षा का विद्यार्थी था। मेरे जन्मजात संस्कार में भेद-भाव, लडाई-झगडा, ईर्ष्या-द्वेष, तेरा-मेरा रहा ही नहीं। परंतु इससे विपरीत सहिष्णुता, संगठन, सेवा, प्रेम का भाव एवं व्यवहार ही रहा है। इसलिए दोनों गुटों को मिलाने के लिए, भेद-भाव दूर करने के लिए मैं प्रयास करता रहा। दोनों गुट की पर्वाह किए बिना मैं मेरे मित्र के यहाँ जाना, खाना खाना, एक साथ बातचीत करना, घुमना आदि करता रहा। यह सब हमारे बडे गुट के लोगों को सहन नहीं हुआ। वह मुझे यह सब करने के लिए मना करने लगे व नाराज होने लगे। वे सब मेरे से उम्र, अधिकार एवं संबंध में बहुत बडे थे तथापि उनका अनादर किये बिना ही मैं पूर्वोक्त काम को अधिक करने लगा। सबके सामने ही मुख्य गली में मेरे विरोधी पार्टी के मित्रों के कंधे से कंधा मिलाते हुए सबको जताते हुए, बताते हुए, दिखाते हुए और भी अधिक जाने

आने लगा। मेरा बाल्यकाल से व्यवहार सबके प्रति नम्र, शालीन, सहयोग पूर्ण होने के कारण और उपर्युक्त मेरे व्यवहार से प्रभावित होकर धीरे-धीरे अन्य बच्चे व बडे परस्पर मिलने जुलने, बोलने-चालने लगे जिससे दोनों गुट मिल गये। इसी प्रकार ब्रह्मचारी अवस्था में भी झकोरा (म.प्र. बुंदेल खण्ड) में भी दो विरोधी गुटों को मिलाया। उपाध्याय अवस्था में कर्नाटक में महिषवाडी के लोगों की कटुता/ दूरी को दूर किया। इसी प्रकार धार्मिक संप्रदाय, पंथवाद में जो कटुता/ दूरी है उसे मैं बाल्य काल से न स्वीकार करता हूँ, न बढावा देता हूँ, परंतु उसे दूर करने के लिए यथा योग्य पूर्ण प्रयास करता हूँ। भले उन पंथों के गुणों के साथ-साथ दोषों को भी जानता हूँ। मैं हर व्यक्ति, पंथ, सम्प्रदाय, समाज, संगठन आदि के गुणों को स्वीकार करता हूँ किंतु दोषों को स्वीकार नहीं करता हूँ। दोषों को लेकर उनसे घृणा नहीं करता हूँ। संदर्भ के अनुसार दोष दूर करने के लिए जताता, बताता, लिखता भी हूँ। इसलिए मेरे भक्तों में दिगम्बरों के साथ-साथ हिंदू, मुस्लिम, शीख, गायत्री परिवार, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, विहिप, गौरक्षा, नारायण सेवा संस्थान, हृदय परिवर्तन आंदोलन तथा विभिन्न राजनैतिक दलों के कार्यकर्ता भी है। इतना ही नहीं मेरे द्वारा स्थापित 1) धर्म दर्शन विज्ञान शोध संस्थान 2) धर्म दर्शन

सेवा संस्थान के कार्यकर्ताओं में भी दिगम्बर एवं श्वेताम्बर जैन के साथ$_2$ हिंदू भी है। जो कि विशेषत: वैज्ञानिक, प्रोफेसर, इंजीनियर, प्राध्यापक, न्यायविद् है। इतना ही नहीं हर प्रवचन, शिविर, साहित्य, लेख, संगोष्ठी आदि में विभिन्न धर्म, दर्शन, विज्ञान, गणित, इतिहास का भी समन्वय करता हूँ। यह समन्वय द्रव्य की प्रकृति, अनेकान्त सिद्धान्त की प्रवृति एवं विश्व की आवश्यकता है।

सहिष्णुता, समन्वय, समता एवं अनेकान्त को मैं प्रायोगिक रूप में जीवन में अपनाते हुए भी असत्य, हठग्राहिता, तानाशाही, दबाव, दोष आदि को नकारने के लिए भी सत्साहस से लबालब भरा हूँ। कांजी पंथियों ने एकांत, हठवाद को लेकर अनेकान्त, समन्वय, संगठन, अहिंसादि श्रावक एवं मुनिव्रत, साधु-संत एवं पुण्य को नकारने, उनसे घृणा करने लगे, समाज में विषमता फैलाने लगे उसे भी दूर करने के लिए मेरे नेतृत्व में हमारे संघ ने पूर्ण प्रयास किया। हमारा यह प्रयास कर्नाटक, महाराष्ट्र (नागपुर), उत्तर प्रदेश (हस्तिनापुर), राजस्थान (जयपुर) तक लगातार छ:-सात वर्ष तक चलता रहा। नागपुर में उन्होंने कोर्ट में केस भी किया। कोर्ट में हमने ये पक्ष रखा की हमें किसी पंथ, मत, व्यक्ति से किसी भी प्रकार का द्वेष, भेद-भाव या घृणा नहीं है। परंतु वे लोग जो जैन धर्म के नाम पर

जैन धर्म के विरुद्ध में प्रचार-प्रसार कर रहे हैं उन्हें हम स्वीकार नहीं करते हैं। कोर्ट ने कुछ ही दिनों में निर्णय दिया की कांजीपंथी (मुमुक्षु) जैन धर्म नहीं है यह एक स्वतंत्र पंथ है। कोर्ट का निर्णय एक छोटी पुस्तिका के रूप में हिंदी, अंग्रेजी में महासभा द्वारा प्रकाशित किया गया। यह सब करते हुए भी उस समय या अभी भी उनके प्रति किसी भी प्रकार की घृणा, कटुता मेरे मन में नहीं है। उस समय भी जब वे चौका लगाते थे तब हम उनके चौके में आहार करने के लिए जाते थे। वे पढने के लिए आते हैं तो मैं पहले भी पढाता था अब भी पढाता हूँ। तथापि एकान्त, हठग्राहीता, दूषितमनोवृत्ति, दुर्व्यवहार को न स्वीकार करता था और न अब करता हूँ। इनका मत (कांजीमत)जैन धर्म, विज्ञान तथा विश्व के विरुद्ध है। इसे सिद्ध करने के लिए मैंने 1) अनेकान्त सिद्धान्त 2) निमित्त उपादान मीमांसा 3) पुण्य पाप मीमांसा 4) ज्वलंत शंकाओं का शीतल समाधान लिखा है। तथापि कटु भाव या शब्द का प्रयोग नहीं किया हैं।

मैंने विद्यार्थी जीवन से विभिन्न धर्म के साथ-साथ बौद्ध धर्म का भी अध्ययन किया एवं उनके साधु-संतों से भी चर्चाएं की। ब्रह्मचारी अवस्था में मैं राजग्रही में बौद्धों के विहार (मंदिर, मठ, स्तुप) में साधुओं के साथ चर्चा के लिए गया। वहाँ कुछ साधुओं से

मेरी चर्चा हुई। चर्चा के अन्तर्गत क्षणिकवाद, अनात्मवाद पर भी चर्चाएँ हुई। दूसरे दिन जब मैं फिर से चर्चा के लिए गया तो बौद्ध भिक्षु बहार गये हुए थे। उनके लिए मैंने कुछ समय प्रतीक्षा की। जब वे बाहर से आये तो उन्होंने मेरा नाम पुकारते हुए कहा-''आप आ गये'' ? मैंने तत्काल उत्तर दिया क्षणिकवाद व अनात्मवाद के अनुसार हम दोनों कल ही नष्ट हो गये, फिर आपको कैसे स्मरण है कि मैं वही कल का व्यक्ति हूँ और आप भी वही कल के व्यक्ति हो। बौद्ध भिक्षु निरुत्तर हो गये तथा कहने लगे इसका उत्तर हमें मालूम नहीं है परंतु बौद्ध ग्रंथों में क्षणिकवाद आदि का वर्णन है।

जब मैं विभिन्न धार्मिक तीर्थ, साधु-संत आदि के दर्शन, श्रवण, मंथन, परीक्षण करते हुए सम्मेद शिखर में आचार्य श्री विमल सागर जी गुरुदेव के अचौर्य धर्म के बारे में प्रवचन सुना तब प्रवचन के अंत में सभा में ही प्रश्न किया ''गुरुदेव क्या रात को अंधेरे में छिपकर चोरी करना ही चोरी है या दिन में भी मिलावट, शोषण, भ्रष्टाचार, ठगबाजी, ब्याजखोरी करना भी चोरी है''? आचार्य श्री ने केवल ''हाँ'' संक्षिप्त उत्तर दिया। मैं बाल्यकाल से ही भारत में जो मिलावट आदि होती हैं उसे बहुत बडा पाप/हिंसा/चोरी/भ्रष्टाचार मानता हूँ। बाल्य विद्यार्थी अवस्था में विभिन्न साहित्य में पढा,

विभिन्न प्रवचन, भाषण, चर्चा में अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, परोपकार, विभिन्न दान, सादा जीवन उच्च विचार, स्वार्थ त्याग, सहिष्णुता, प्रमाणिकता, वीतरागता, निष्काम कर्म योग, वीतराग विज्ञान, शरीर आदि भौतिक तत्त्व आत्मा से भिन्न, चार आश्रम, चार पुरुषार्थ आदि भारत की महानता है, इससे भारत महान् है ऐसा सुना परंतु प्रायोगिक रूप में भारत में जो व्यापार, राजनीति, कानून, समाज, तथा कथित धार्मिक जनों में उपर्युक्त गुणों से विपरीत दुर्गुणों को पाया; यह भी मेरे वैराग्य का मुख्य कारण बना। जब 1983 में हमारे संघ का चातुर्मास तुमकुर (कर्नाटक) में था उस समय दिल्ली में कोई जैन उप नाम लगाने वाले ने डालडा में कई क्विंटल चरबी मिलाई थी। जब पत्रिकाओं में यह प्रकाशित हुआ तब वहाँ के मेरे लिंगायत, हिंदू भक्त मुझे बार-बार इस संबंध में उलाहना देते रहें और आम सभा में इसके बारे में राय प्रकट करने का आग्रह किया। 21 दिन के त्रिलोक तिलक महामंडल विधान पूजा के प्रवचन में जब मैंने बताया कि ''ऐसा कार्य करने वाला वस्तुत: जैन धर्मावलम्बी हो ही नहीं सकता ! और हम उसे जैनी रूप में स्वीकार नहीं करते हैं।'' तब जाकर सब शांत हुए। ऐसी और भी घटनाओं के कारण मैंने जो नाम के आगे 'जैन' उपनाम लगाने का अभियान

चलाया था उसे धीरे-धीरे बंद कर दिया। क्योंकि इससे महान् जैन धर्म का अपमान होता है। कोई व्यक्ति विशेष के कारण महान् जैन धर्म की निंदा हो यह मेरे लिए असहनीय है।

हमारा संघ (प्राय: 35 साधु-साध्वी) दक्षिण से विहार करता हुआ आरा (बिहार) में चातुर्मास करके बडौत (उत्तर प्रदेश) चातुर्मास के बाद मुजफ्फर नगर में चातुर्मास हुआ। उस अवधि में दंगे के कारण प्राय: एक महिने का कर्फ्यु लगा। श्रावक लोग आ. कुंथुसागर जी गुरुदेव के पास आकर कहने लगे कि ''यह क्षेत्र दंगे का एवं अति संवेदनशील है और नगर भी बडा है। इसलिए कर्फ्यु में हम सभी श्रावक चौका (आहार व्यवस्था) यही जैन औषधालय (चातुर्मास स्थान) में ही लगायेंगे।'' तब आचार्य श्री ने कहा- ''मैंने संघ का अनुशासन एवं व्यवस्था का उत्तरदायित्व उपाध्याय श्री (सद्य में आ. श्री कनकनंदी जी) को सौंपा है आप उन्हीं से इस संदर्भ में विचार-विमर्श कर निर्णय लो।'' (मैंने प्राय: 15 वर्ष तक आचार्य श्री की आज्ञा से संघ का अनुशासन एवं व्यवस्था का उत्तरदायित्व वहन किया) वे सभी श्रावक मेरे पास आये और मुझे सम्पूर्ण विषय सविस्तार कहा। मैंने उनकी बातों को सुनकर कहा कि - ''हम कोई दंगा करने वाले नहीं है ! हम सरकार या प्रशासन के ऐसे किसी भी

कानून को नहीं मानते और न उसके आधीन में काम करने वाले हैं हम आत्मानुशासी है, हमारा आत्मानुशासन आध्यात्म से प्रेरित है।'' दूसरा मुझे कानून का एवं राजनीति का प्रायोगिक ज्ञान विद्यार्थी जीवन से है। मैंने कहा कि '' हम न किसी से दबते हैं, न किसी से डरते हैं और न किसी को दबाते हैं, न किसी को डराते हैं। आप तो नगर में ही चौका लगाइये तथा पहले से भी अधिक दूर-दूर चौका लगाइये, सब से दूर वाले चौके में मैं स्वयं आहार करने जाऊँगा। तब मैं देखुँगा प्रशासन, पुलिस, सरकार, कानून हमारे प्रति क्या व्यवहार करते हैं और फिर मैं उन्हें यथार्थ प्रशासन, कानून सीखा दूँगा।

मुजफ्फरनगर तब प्राय: 15-16 लाख जनसंख्या वाला नगर था। वहाँ के जैन लोग उच्च शिक्षित, श्रीमान्, धीमान्, एवं गुरुभक्त हैं। वहाँ का अधिकांश उच्च शिक्षित वर्ग मेरे पास पढने, मेरे साहित्य में कार्य करने, सेवा, आहार दानादि कार्य करने के लिए आते थे। इसलिए उन्हें मेरे ज्ञान, अनुशासन, दृढता का पहले से ही परीचय था। इसलिए उन्होंने मेरे कहने के अनुसार नगर में ही चौका लगाया। दूसरे दिन मैं सबसे दूर वाले चौके में आहार के लिए गया। मेरे पीछे-पीछे और चौका में आहार देखने के लिए पहले से भी अधिक लोग इकठ्ठे हो गये। आहार करके वापस आते समय रास्ते में

जितने पुलिस वाले मिले सभी को मैंने बताया कि हमारे पास आने वाले, हमें आहार देने वाले को किसी प्रकार का निषेध नहीं करना, रोकना नहीं। कर्फ्यू के कारण स्कूल, कॉलेज, ऑफिस, व्यापार, यातायात सभी बंद हो गये थे परंतु जैन औषधालय में पहले से भी अधिक लोग हमारे पास स्वाध्याय आदि में आने लगे। जैन औषधालय मानो सभी के लिए कर्फ्यू मनाने का केंद्र स्थल बन गया था। लगभग एक महिने के बाद दंगा और भी भयंकर हुआ। बंदुक, तलवारें चलने लगी, कई व्यक्तियों की मृत्यु हुई तथा अनेक घायल हुए जिसके कारण मार्शल लॉ लग गया। घर में सभी नजरबंद हो गये दंगाइयों को देखते ही गोली मारने का आदेश था। श्रावक लोग अधिक घबरा गये। हमारा संघ भी विशाल था। इसलिए चौका के लिए, आहार देने के लिए साधु-संतों को लाने ले जाने के लिए श्रावकों का जाना आना भी अनिवार्य था इसलिए श्रावक लोग मेरे पास गिडगिडाते हुए आये और अनुरोध करने लगे गुरुदेव ! अभी तो मार्शल लॉ लग गया अब हम क्या करें, हमें आप अनुमति दीजिए कि हम सभी मिलकर जैन औषधालय में ही चौका लगायेंगे। मैंने पुन: दृढता और गंभीरता से कहा नहीं यह कदापि संभव नहीं। हम प्राकृतिक न्याय के अनुसार चलने वाले हैं। क्या पक्षी, सूर्य, चंद्र,

वायु आदि मनुष्य के कानून को मानते हैं ? हम भी स्व-पर को बिना कष्ट दिये व्यवहार करने वाले है। इसलिए मार्शल लॉ को भी नहीं मानते हैं। श्रावक लोग मेरे दृढता से निरुत्तर होकर चले गये। दूसरे दिन जब मैं आहार के लिए जैन औषधालय से निकल रहा था कि मिलेक्ट्री की 10-12 गाडियाँ अचानक मेरे सामने आ गई। मैं और भी दृढता से उन मिलेक्ट्री की गाडियों की ओर बढता गया। सम्पूर्ण गाडियाँ रुक गई। सब सैनिक मुझे आश्चर्य से निस्तब्ध होकर देखते ही रह गये। एक दिन अशोक वकील और मैं दूर्बिन से मार्शल लॉ के कारण शांत/स्तब्ध नगर को देख रहें थे कि दो पुलिस मेन एक दूधवाले को मारते हुए खदेड रहे थे। इससे मुझे बहुत पीडा हुई। मैंने पुलिसवालों को बुलाकर समझाया कि बेचारे निर्दोष दूधवाले को मारना उचित नहीं है। महिनों के कर्फ्यू एवं मार्शल लॉ के कारण दूधवाला तथा दूध प्राप्त करने वाला परिवार कितनी समस्यायें झेल रहे हैं। क्या इसके समाधान के लिए सरकार, प्रशासन या आप लोगों ने कोई व्यवस्था की है ? आप लोग दंगा करने वाले तथा उसके पीछे काम करने वाले नेताओं की तो सेवा/सुरक्षा करते हो और निर्दोष नागरिकों को सताते हो। आगे किसी भी निर्दोष व्यक्ति को नहीं सताने का नियम देकर मेरी पुस्तक ''क्षमावीरस्य भूषणम्'' पढने के

लिए दी और हमारे पास आने वालों को रोक टोक नहीं करने के लिए कहा। इसका परिणाम यह हुआ कि ‘‘जैन औषधालय’’ आना दूसरों के लिए सुरक्षा कवच बन गया।

चातुर्मास के अनन्तर हमारा संघ दिल्ली पहुँचा। गांधी नगर में आहार के लिए जाते समय हमारे संघस्थ मुनि कुशाग्रनंदी को किसी ने पत्थर मारा परंतु पत्थर उन्हें नहीं लगा। जैन महिलाओं ने जाकर दोषी को सजा देने के लिए थाने का घेराव किया। थानेदार ने आ. कुंथुसागर जी गुरुदेव को महिलाओं को समझाने के लिए थाने में आने का अनुरोध किया और आचार्य श्री की सूचना मुनि कुमार विद्यानंदी ने मेरे पास पहुँचाई। मैंने तत्काल सोच लिया कि नैतिक अधिकार की लडाई के लिए यह एक समुचित अवसर है, इसलिए मैंने आचार्य श्री को थाने में जाने के लिए मना कर दिया। दूसरे दिन से इस घटना के कारण प्रवचन में हमसे मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिए श्रावकों से लेकर बडे-बडे नेता तथा मंत्री अधिकाधिक संख्या में आने लगे। प्रवचन में लगभग 15-20 हजार श्रोता होते थे तथा विभिन्न मंत्री एवं नेताओं के प्रवचन में आने के कारण तथा गर्म वातावरण एवं क्रांतिकारी ओजस्वी प्रवचन के कारण प्रवचन स्थल के चारों तरफ सैनिक पहरा देते थे। प्रवचन में हमने मुख्यत: यह

विषय रखा - ‘भारत आध्यात्मिक प्रधान साधु-संतों का देश है।’ भारतीय संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान, परम्परा, विरासत, धरोहर आदि साधु-संतों से प्रदत्त है। यदि साधु-संत के योगदान को भारत से ऋण किया/निकाल दिया जाय तब भारत शून्य हो जायेगा। द्वितीयत: भारत एक लोकतंत्रात्मक देश है। यहाँ हर धर्मावलम्बी मर्यादा में स्व-स्व धर्म को पालन करने के लिए पूर्ण स्वतंत्र है। जैन धर्म भारतीय प्राचीनतम मूल धर्म है। इसलिए भारत हमारी मूल मातृभूमि है। हमारा सबसे अधिक अधिकार भारत में रहने का है, विचरण करने का है। हम अहिंसक है परंतु कायर नहीं है। जैन धर्म के संपूर्ण तीर्थंकर एवं शलाका महापुरुष क्षत्रिय राजा-महाराजा हुए हैं। भारत का नामकरण भी इस युग के प्रथम जैन तीर्थंकर ऋषभदेव के ज्येष्ठ पुत्र चक्रवर्ती भरत के नाम पर हुआ। हम तब तक अहिंसा पूर्ण शांतिमय क्रांति करते रहेंगे जब तक हमें पूर्ण अधिकार प्राप्त नहीं होता है। इसी से नेता, मंत्री आदि ने भरी सभा में क्षमा याचना पूर्वक पुन: इस प्रकार दुर्घटना नहीं होने का प्रण किया।

हमारा संघ जब राजस्थान के खेरवाडा में था तब हम मिलेक्ट्री कैम्प के मध्य होते हुए शौच क्रिया एवं भ्रमण के लिए रोज आते-जाते थे। एक दिन वापस आते समय कैम्प में तैनात एक

बंदुकधारी सैनिक ने बीडी पीते हुए मुझसे कहा आप नंगे होकर इस मिलेक्ट्री कैम्प से आना-जाना नहीं कर सकते। मैं वहीं दृढता से खडा होकर उसे फटकारते हुए कहा कि तुम सैनिक होकर तथा कार्य में तैनात होकर भी बीडी पी सकते हो, हम हमारे भारत में मर्यादा से स्वतंत्रता से विहार क्यों नहीं कर सकते ? क्या भारत तुम्हारे बाप का है? तुमने क्या भारत को खरीद रखा है ? तुम भारत के रक्षक हो या भारतीय संस्कृति के भक्षक हो ? भारतीय संस्कृति साधु संस्कृति है। इसलिए भारत में सब से अधिक अधिकार हमारा है। तुम हमारे रक्षक एवं सेवक हो। उसे मैं 5-10 मिनट तक समझाते हुए डाटता रहा। आस-पास के सैनिक मेरे पास एकत्रित होकर क्षमा मांगते हुए इस प्रकार की दुर्घटना आगे नहीं होगी ऐसा कहा। एक दो दिन के बाद ही वहाँ के मुख्य अधिकारी ने मेरे पास आकर मिलेक्ट्री कैम्प में ही सैनिक के लिए संबोधन करने के लिए कहा। लगभग 1100 सैनिक एवं सैनिक अधिकारी तथा अनेक नागरिक प्रवचन में एकत्रित हुए। मैंने लगातार डेढ घंटा भारत की संस्कृति-परम्परा, राजनीति, कानून, सैनिक एवं साधु-संतों के बारे में प्रवचन किया। यह प्रवचन रिकॉर्ड किया गया एवं विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ तथा मेरे साहित्य में भी प्रकाशित हुआ है। इसका फोटो ‘‘सर्वोदय

शिक्षा मनोविज्ञान’’ में भी प्रकाशित हुआ है। इसी प्रकार NCERT (नई दिल्ली) की ग्यारवीं कक्षा की इतिहास की किताब ‘‘प्राचीन भारत’’ में जैन धर्म, भ. महावीर, महात्मा बुद्ध तथा वैदिक धर्म के बारे में जो असंगत विषय लिखा गया था उसका भी घनघोर विरोध प्रवचन, संगोष्ठी, रैली, कलेक्ट्री के माध्यम से केंद्र सरकार, मानव संसाधन मंत्रालय को रिपोर्ट भेजकर संशोधन के लिए ज्ञापन भेजा। अनेक संपादक तथा वैज्ञानिक M.M. बजाज को भी लेखक के पास भेजकर इसे दूर करने के लिए कहा। जिससे इसका संशोधन हुआ। इसी प्रकार 2005 में राजस्थान सरकार ने नई आबकारी (मद्य) नीति के अनुसार मद्य की दूकान की संख्या बढा दी गई एवं मद्य का मूल्य घटा दिया गया तथा इस क्षेत्र में महिलाओं को आगे किया गया। मुझे जब समाचार पत्रों से यह सूचना प्राप्त हुई तब मुझे अत्यधिक खेद हुआ। मैं कुछ दिन तक प्रतिक्षा करता रहा कि कोई इसका विरोध करें किंतु इसका विरोध पूरे राजस्थान में किसी ने नहीं किया। सर्वप्रथम इसका विरोध प्रवचन के माध्यम से मैंने किया एवं आगे जाकर विशाल रैली निकलवाकर कलेक्ट्री के माध्यम से मुख्यमंत्री को इसका ज्ञापन दिया गया। उसके बाद धीरे-धीरे इसका विरोध पूरे राजस्थान में होने लगा। विभिन्न संगठन मेरे पास आकर

इसके लिए मार्गदर्शन एवं आशीर्वाद प्राप्त कर रहे हैं। गृहमंत्री गुलाबचंद कटारिया को भी प्रत्यक्ष रूप से तत्काल ज्ञापन दिया गया। उन्होंने कहा- यह कार्य अभी तक जयपुर में भी कोई प्रारंभ नहीं कर पाया है किंतु आचार्य श्री ने इतनी बडी क्रांति की है। गृहमंत्री को व्यक्तिगत रूप से बुलाकर कहा आपकी सरकार नई आबकारी (मद्य) नीति के माध्यम से व्यक्ति प्रदूषण, परिवार प्रदूषण, आर्थिक प्रदूषण, नैतिक प्रदूषण कर रही हैं। जनता आपके विरुद्ध हो रही है। इस नीति को परिवर्तित नहीं करने पर आपके सरकार की दुर्दशा अवश्य होगी। उन्होंने स्वीकार किया की विधान सभा में 80% नेता मंत्री आदि शराबी है इसलिए इसका विरोध कोई नहीं कर रहा है। तब मैंने कहा कि मैं यह अभियान चलाता ही रहूँगा। इस प्रकार मैं लोकहित याचिका के माध्यम से, प्रवचन, साहित्य, लेख, शिविर, संगोष्ठी के माध्यम से नशीली वस्तु, हिंसा, बुचड खाना, अश्लीलता, फैशन-व्यसन आदि का विरोध कर रहा हूँ, और आगे भी करता रहूँगा। इसके लिए मुझे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, विहिप, गौरक्षा, अंतर्राष्ट्रीय गायत्री परिवार, हृदय परिवर्तन आंदोलन, स्वदेशी आंदोलन, सर्वोदय आदि संगठनो एवं विभिन्न धर्मावलम्बियों का सहयोग प्राप्त हो रहा है। मैं इन सब के माध्यम से भारत को पुन: विश्वगुरु बनाना चाहता हूँ।

3) विशेष अध्ययन-अध्यापन एवं शोध कार्य :- पूर्व में मैंने वर्णन किया है कि मैं बाल्यकाल-विद्यार्थी जीवन से ही अध्ययन-अध्यापन एवं शोध प्रवृत्ति वाला रहा हूँ। परंतु आयु एवं शिक्षा में वृद्धि होने के साथ-साथ मेरी यह प्रवृत्ति उत्तरोत्तर बढती जा रही है। मैं विद्यार्थी जीवन से ही विभिन्न विषयों के साथ-साथ चार भाषाओं का भी ज्ञान रखता था। मैं पाचवीं-छठी कक्षा से ही अंग्रेजी बोलने लगा था। मैं जब आठवीं कक्षा में पढता था तब एक बार हठात् इन्स्पेक्टर (कक्षा निरीक्षक) हमारी कक्षा में आये और अंग्रेजी में ‘ऊँट’ के बारे में भाषण करने के लिए कहा। इस समय तक मैंने कभी ‘ऊँट’ देखा ही नहीं था। कक्षा में किसी ने भाषण करने के लिए हाथ नहीं उठाया। तब मैंने खडे होकर ऊँट के बारे में लगातार पांच-दस मिनिट तक भाषण दिया जिससे पूर्ण कक्षा, शिक्षक के साथ-साथ वे निरक्षक भी प्रसन्न हो गये। प्रथम बार जब मैंने वाद-विवाद प्रतियोगिता में भाग लिया तब मैंने ग्राम के पक्ष में भाषण प्रस्तुत किया। विभिन्न भाषाओं के श्लोक, कोटेशन के माध्यम से धार्मिक, वैज्ञानिक, पर्यावरण एवं सांस्कृतिक पक्षों को प्रस्तुत करके मैंने ग्राम को नगर से श्रेष्ठ सिद्ध किया। धारा प्रवाह, साहस पूर्ण भाषण से हमारे विभाग एवं आस-पास के विद्यार्थियों से लेकर शिक्षक तक सानंद आश्चर्य

से सुनते रहे व सबने प्रशंसा की एवं मुझे प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ। पुरुस्कार में मुझे महात्मा बुद्ध पर डॉ. सर्वोपल्लि राधाकृष्णनन् की लिखित एक पुस्तक एवं एक दर्पण प्राप्त हुआ। उसके बाद आगे हर प्रतियोगिता में मुझे कक्षा के सहपाठी से लेकर कक्षा शिक्षक एवं पूरा शिक्षण संस्थान मुझे ऐसे कार्यक्रमों का अध्यक्ष बनाते थे। मैं अपने गुरुजनों के साथ उनकी पंक्ति में अध्यक्ष के रुप में बैठता था तथा अंत में अध्यक्षीय भाषण करता था। मैंने बाल्यकाल से ही कभी भी अन्याय का पक्ष नहीं लिया है और न आगे भी लुँगा। **मेरी दृष्टी में सत्य ही परमेश्वर है, समता ही साधना है एवं शांति ही प्राप्य है। इन सबके लिए ज्ञान एक मात्र आधार है।** इसके लिए मैं सामान्य अनेक विद्यार्थियों से लेकर विद्वान्, प्रोफेसर्स, वैज्ञानिक, साधु-साध्वी, धार्मिक पंडितों से विभिन्न भाषाओं तथा विभिन्न विधाओं का ज्ञानार्जन सतत् किया है, कर रहा हूँ और आगे भी सतत् करता रहूँगा। जैन धर्म का प्राथमिक ज्ञान मैंने मेरे परम पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री कुंथुसागर जी से प्राप्त किया। विशेष संस्कृत एवं प्राकृत व्याकरण का अध्ययन श्रवणबेलगोल में सहस्त्राब्दी महामस्तकाभिषेक के अवसर पर पंडित प्रभाकर से किया। उस समय प्राय: 225 आचार्य, उपाध्याय, साधु-साध्वी एवं पंडितों का

सामुहिक स्वाध्याय एवं तत्त्व चर्चा होती थी। उसमें मैंने अनेक गहनतम शंकाओं के समाधान को प्राप्त किया। मेरी मुनि दीक्षा भी सैकडों आचार्य, साधु-साध्वी एवं लाखों देश विदेश के श्रावकों के मध्य हुई। मैंने सैद्धान्तिक ज्ञान गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी के साथ-साथ अनेक विद्वानों एवं आचार्यादि से प्राप्त किया। अभी अनेक वर्षो से दिगम्बर जैन के चारों अनुयोगों के साथ-साथ श्वेताम्बर जैन, हिंदू, बौद्ध आदि शास्त्रों का भी अध्ययन कर रहा हूँ। अभी कुछ वर्षो से मैं आधुनिक ज्ञान-विज्ञान का विशेष अध्ययन करके तुलनात्मक शोधपूर्ण चिंतन, मनन, अध्ययन, अध्यापन, लेखन आदि का कार्य कर रहा हूँ। भारत में एक दुर्बल प्रवृत्ति है कि विदेश के वैज्ञानिक लोग जो कुछ शोध करते हैं उस ज्ञान/शोध के बाद कहते हैं कि यह ज्ञान तो हमारे भारतीय साहित्य में पहले से ही है। यह पिछलगुपना विकास के लिए बाधक है। इसलिए अभी मैं 3-4 वर्षो से ‘‘जैन तथ्य जो आधुनिक विज्ञान से परे’’ साहित्य एवं लेखन शृंखला के माध्यम से भारतीय प्राचीन साहित्य में तथा विशेषत: जैन साहित्य में निहित ज्ञान-विज्ञान को आधुनिक ज्ञान-विज्ञान से भी श्रेष्ठ, सत्य-तथ्यात्मक है यह सिद्ध करने में सतत् प्रयासरत हूँ। इस शृंखला में मैंने अभी तक 1) ब्रह्माण्डीय जैविक, भौतिक एवं

रासायनिक विज्ञान 2) अनन्त शक्ति सम्पन्न परमाणु से लेकर परमात्मा 3) करें साक्षात्कार यथार्थ सत्य का 4) वैज्ञानिक आईन्स्टीन के सिद्धान्तों को पुन: परीक्षण की आवश्यकता 5) ब्रह्माण्ड एवं प्रतिब्रह्माण्ड : धार्मिक एवं वैज्ञानिक विश्लेषण 6) करें साक्षात्कार यथार्थ धर्म, भाव, शिक्षा, संस्कृति का ! प्रकाशन हो चुका है। अभी प्रकाशनाधीन में 1) विश्व का परम विचित्र प्राणी मनुष्य 2) पञ्चविध एकेंद्रिय जीव 3) लौकिक एवं अलौकिक गणित आदि कृतियों का लेखन कार्य चल रहा है। इन सब विषयों को अभी कुछ वर्षों से अनेक वैज्ञानिक, प्रोफेसर्स, इंजिनीयर, प्राध्यापक आदि को पढा रहा हूँ। मेरे उद्देश्यों को डॉ. राजमल जैन, डॉ. नारायण लाल कछारा आदि विदेश में इसे अप्रवासी भारतीय, विश्व विद्यालय, वैज्ञानिक एवं विभिन्न संस्थाओं में प्रचार-प्रसार कर रहे हैं। अभी तक 1) 26 धर्म दर्शन विज्ञान प्रशिक्षण शिविर 2) राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय 6 वैज्ञानिक संगोष्ठी 3) www.jainkanaknandhi.org (इंटरनेट वेबसाईट) 4) E-mail info@jainkanaknandhi.org 5) सैकडौं धार्मिक प्रशिक्षण कक्षायें 6) 150 शोधपूर्ण ग्रंथों का छ: भाषाओं में अनेकों संस्करणों में प्रकाशन 7) सैकडों लेखों का 15-20 दिगम्बर जैन,

श्वेताम्बर जैन, स्थानीय एवं राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशन 8) स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय में प्रवचन, शिविर आदि आयोजन हुए हैं और आगे भी होते रहेंगे।

अभी जैन विश्व भारती लाडनु एवं मोहनलाल सुखाडिया विश्व विद्यालय में मेरे साहित्य के लिए 'आचार्य श्री कनकनंदी जी कक्ष' की स्थापना हो चुकी है। विभिन्न विश्व विद्यालय में मेरे साहित्य के ऊपर शोध कार्य भी हो रहे हैं । यह शोध कार्य निष्पक्ष, वैज्ञानिक, गणितिय पद्धति के माध्यम से एवं आध्यात्मिक, वैश्विक सुख-शांति की दृष्टि से हो रहा है। इसके माध्यम से संकीर्णता, अंधविश्वास, धार्मिक कट्टरता, संकीर्ण राष्ट्रीयता, स्वार्थनिष्ठ राजनीति, अंधाकानून, विदेशियों द्वारा लिखित विकृत इतिहास-संस्कृति, शिक्षा आदि का संशोधन करते हुए यथार्थ सत्य-तथ्य को उजागर करना है। इन सब विषयों को मैं हमारे संघस्थ साधु-साध्वी, ब्रह्मचारी आदि के साथ-साथ अन्य संघस्थ साधु-साध्वियों को भी पढा रहा हूँ। अभी तक हमारे संघ के प्राय: 150 आचार्य, उपाध्याय, साधु-साध्वी, क्षुल्लक-क्षुल्लिका, ब्रह्मचारी-ब्रह्मचारीणियों के साथ-साथ आ. श्री अभिनन्दनसागर जी ससंघ, गणिनी आर्यिका विशुद्धमति माताजी (आ. निर्मलसागर जी की शिष्या) ससंघ, आचार्य विमलसागर

जी, भरत सागर जी ससंघ, हस्तिनापुर के शिविर में भारत के लगभग 100 पंडितों के साथ-साथ आर्यिका ज्ञानमति माताजी ससंघ, जयपुर में शिविर तथा कक्षा में हजारों विद्यार्थियों के साथ-साथ जैन संस्कृत कॉलेज के विद्यार्थियों से लेकर प्राचार्य तक को आचार्य विद्यासागरजी की गृहस्थाश्रम की दोनों बहिनों के साथ-साथ उनकी अनेक ब्रह्मचारिणियों को , आर्चाय सन्मतिसागर (ज्ञानानन्द) की अनेक ब्रह्मचारिणियाँ तथा अनेक जैन के साथ-साथ हिंदू प्रोफेसर्स को भी पढाया। जब हमारा संघ धारवाड (कर्नाटक) बोर्डिंग में था तब धारवाड कर्नाटक विश्व विद्यालय के प्रो. डॉ. उमाकांत (अखिल भारतीय कॉंग्रेस के अध्यक्ष निजलिंगप्पा के सुपुत्र) ने मेरे पास आकर धार्मिक, वैज्ञानिक दृष्टि से सापेक्ष सिद्धान्त, अणु सिद्धान्त के बारे में अनेक जिज्ञासाओं का समाधान प्राप्त किया और उन्होंने प्रसन्नता से कहा - जिस सिद्धान्त को मैं आपके पास सरलता से समझ गया उस सिद्धान्त को सहीं रूप से समझने के लिए मैं अभी तक लाखों रुपये खर्च करके जर्मनी, फ्रांस, अमेरिका तथा दिल्ली तक घूमा परंतु इन सिद्धान्तों को सही रूप से समझ नहीं सका उसे आपने मुझे बहुत ही सरलता से समझा दिया। इस घटना के बाद तो वहाँ के वैज्ञानिक, प्रोफेसर्स, विद्यार्थी हमारे पास अध्ययन के लिए उमड पडे। हम जहाँ

भी विहार करते थे वहाँ के जैन, हिंदू, लिंगायत, वैज्ञानिक, प्रोफेसर्स हमारे साथ-साथ मेरा कमण्डल लेकर चलते थे एवं मुझसे विभिन्न शंकाओं का समाधान करते थे। मैंने समनेवाडी वर्षायोग के अवसर पर धवला का अध्ययन-अध्यापन प्रारम्भ किया जिसमें हमारे संघस्थ 25 साधु-साध्वियों के साथ-साथ समनेवाडी, बेडकीहाल, सदलगा (आ. विद्यासागर जी का जन्मस्थान) के जैन, हिंदू, लिंगायत के डॉक्टर, विद्वान्, प्रोफेसर्स, वैज्ञानिक तथा विद्यासागर जी की पूर्वाश्रम की दोनों बहने 'पढने आती थी'। दो कक्षा धवला पढाने के बाद तत्त्वार्थ सूत्र एवं जैन धर्म के वैज्ञानिक पक्ष को पढाने के लिए कॉलेज में एक घंटा जाता था। उस कॉलेज में प्रो. मेहता लिंगायत (जिन्होंने 21 शोध निबंध लिखे हैं) के सहयोग से रात में जागकर शक्तिशाली दूर्बीन से ग्रह-नक्षत्रों का निरीक्षण भी किया। आचार्य श्री देशभूषण जी ने वीर सेवादल के कार्यकर्ता एवं सदस्यों को शिविर में पढाने के लिए मुझे चातुर्मास के बाद कोथली में बुलाया और वहाँ पर लगभग 5000 वीर सेवा दल के कार्यकर्ताओं को धार्मिक प्रशिक्षण के साथ-साथ सेवा, सफाई के बारे में प्रशिक्षण दिया। उसके बाद वीर सेवा दल वाले जहाँ भी सेवा के लिए जाते हैं वहाँ सफाई का उत्तरदायित्व भी वहन करते हैं। इन सबसे प्रभावित होकर

त्रिलोकतिलक मंडल विधान के अवसर पर उस क्षेत्र के श्रावक, वीर सेवा दल के कार्यकर्ता, हमारा संघ व आचार्य देशभूषण जी के ससंघ के आग्रह पर एवं मेरी बिना जानकारी, बिना इच्छा के तथा स्टेज पर मना करने के उपरान्त भी **'सिद्धान्त चक्रवर्ती'** की पदवी से अलंकृत किया। इसी प्रकार 'विश्वधर्म प्रभाकर' दिल्ली में, 'ज्ञान विज्ञान दिवाकर' रोहतक (हरि.) आदि में अनेक पदवियाँ प्राप्त हुई।

यथार्थ शिक्षा, शिक्षक, विद्यार्थी, शिक्षाफल तथा शिक्षादि में सुधार के लिए 1) सर्वोदय शिक्षा मनोविज्ञान (लघु एवं बृहत्) 2) करें साक्षात्कार यथार्थ धर्म, भाव, शिक्षा, संस्कृति का 3) नैतिक शिक्षा एवं सामान्य ज्ञान आदि ग्रंथों की रचना की तथा दो राष्ट्रीय वैज्ञानिक संगोष्ठियों का भी अभी तक आयोजन हो चुका है जिसकी स्मारिका भी प्रकाशित है। इसके साथ-साथ स्कूल, कॉलेज, विश्व विद्यालयों में प्रवचन, वाक्पीठ सम्मेलन में प्रवचन, शिविर, कक्षा, स्कूल-कॉलेजों में संस्कृत शिविर, विज्ञान मेला, सांस्कृतिक कार्यक्रम, राष्ट्रीय शैक्षणिक कार्यक्रमों में भाग लेना आदि विभिन्न प्रतियोगिताओं का भी आयोजन हो रहा हैं।

वर्तमान में जो पाठ्य पुस्तकों में इतिहास संबंधी भ्रान्तियाँ, कमियाँ हैं उसे दूर करने के लिए 1) विश्व इतिहास 2) युग निर्माता भगवान् ऋषभदेव 3) अयोध्या का पौराणिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक विश्लेषण 4) भारतीय आर्य कौन? कहाँ से ? कब से ? 5) ऋषभ पुत्र भरत से भारत आदि पुस्तकों की रचना की है।

दिगम्बर जैन धर्म में पूजा-पाठ संबंधी भ्रांतियों, कमियों को दूर करने के लिए 1) जिनार्चना भाग- I, II 2) पूजा से मोक्ष-पुण्य-पाप भी पुस्तकों की रचना की है। जैन धर्मावलम्बियों की भ्रांतियाँ, कमियों को दूर करने के लिए 1) ज्वलन्त शंकाओं का शीतल समाधान 2) धार्मिक कुरीतियों का परिशोधन 3) ये कैसे धार्मिक-निर्व्यसनी-राष्ट्रसेवी 4) जैन धर्मावलम्बी संख्या और उपलब्धि 5) जैन धर्मावलम्बियों की दिशा-दशा-आशा आदि की रचना की है।

यथार्थ आध्यात्मिक वैज्ञानिक धर्म (जैन धर्म) के स्वरूप के लिए 1) स्वतंत्रता के सूत्र (तत्त्वार्थ सूत्र) 2) विश्व विज्ञान रहस्य 3) विश्व द्रव्य विज्ञान (द्रव्य संग्रह) 4) सत्यसाम्यसुखामृतम् (प्रवचन सार) 5) अहिंसा का विश्व रूप (पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय) 6) प्रथम शोध-बोध आविष्कारक एवं प्रवक्ता 7) धर्म दर्शन एवं विज्ञान 8) ब्रह्माण्डीय जैविक, भौतिक एवं रसायन विज्ञान 9) अनन्त शक्ति सम्पन्न परमाणु से लेकर परमात्मा 10) करें साक्षत्कार यथार्थ सत्य का 11) कर्म का दार्शनिक एवं वैज्ञानिक विवेचन 12) आध्यात्मिक मनोविज्ञान (इष्टोपदेश) 13) ब्रह्माण्ड के रहस्य आदि की रचना की है।

इसी प्रकार विभिन्न विधाओं के शोध पूर्ण कृतियों में 1) मंत्र विज्ञान 2) स्वप्न विज्ञान 3) भविष्य फल विज्ञान 4) सर्वाङ्ग विज्ञान की वैज्ञानिक गवेषणा (भाव भाग्य एंव अङ्ग विज्ञान-सर्वाङ्ग सामुद्रिक शास्त्र, बॉडी लॅग्वेज) 5) धर्म एवं स्वास्थ्य विज्ञान 6) ध्यान का वैज्ञानिक विश्लेषण आदि की रचना की है ।

मनुष्य के यथार्थ एवं विकृत स्वरूप को प्रकाशित करने के लिए 1) नित्कृष्टतम स्वार्थी क्रूरतम प्राणी मनुष्य 2)मानवीय निकृष्ट संघर्ष का इतिहास 3) संस्कृति की विकृति आदि की रचनाएं की है। भारत की महानता तथा भारतीयों की कमियाँ, भ्रांतियों को प्रकट करने के लिए 1) भारत को गारत एवं महान् भारत बनाने के सूत्र 2) भारत के सर्वोदय के उपाय आदि की रचना की है। इसी प्रकार धर्म के संस्कृति एवं विकृति को प्रकट करने के लिए 1) धर्म दर्शन एवं विज्ञान 2) हिंसामय यज्ञ का प्रारंभ क्यों 3) शाश्वत समस्याओं का समाधान 4) श्रमण संघ संहिता की रचना की है।

आचार्य विद्यासागर के मिथ्यात्व अकिञ्चित्कर को असत्य सिद्ध करने के लिए ''दंसण मूलो धम्मो तहा संसार मूल हेदूं मिच्छत्तं'' पुस्तक की रचना की है। इसी प्रकार मेरी विभिन्न कृतियों में सत्य-तथ्य, समता-शांति को सिद्ध करने के लिए तथा प्रचार-प्रसार करने के लिए एवं असत्य, विषमता, विकृति, भ्रांतियों को दूर करने के लिए सशक्त परंतु सनम्र प्रयास किया है।

4) मेरे अनुभव :- मैंने केवल लौकिक ज्ञान-विज्ञान, धर्म-दर्शन, भाषा-साहित्य, इतिहास-पुराण आदि के साहित्यों के अध्ययन को जीवन का लक्ष्य एवं ज्ञान का माध्यम नहीं मानता हूँ इसके साथ-साथ भ्रमण, श्रवण, परिसर-प्रकृति-घटना आदि का परीक्षण-निरीक्षण, चर्चा, शंका समधान को भी ज्ञान का साधन मानता हूँ। इन सबसे भी श्रेष्ठ, ज्येष्ठ, स्थाई, जीवनोपयोगी, यथार्थ ज्ञान है अनुभव।

मेरा अनुभव है कि जब तक पानी, शक्कर या आग के बारे में केवल पुस्तकों से पढते रहेंगे, सुनते रहेंगे, बोलते रहेंगे या उसके ऊपर शोध निबंध लिखते रहने पर भी अनुभवात्मक ज्ञान नहीं हो सकता है, जो ज्ञान पानी आदि के सेवन से होता है। उसी प्रकार धार्मिक, लौकिक, वैज्ञानिक या नैतिक, व्यवहारिक आदि के बारे में केवल पढने, सुनने, लिखने, बोलने में वह ज्ञान नहीं होता है जो

उसके प्रायोगिक अनुभव से होता है। क्योंकि अनुभव (अनु+भव) अर्थात् जो होने के बाद प्रयोग में आने के बाद जो अनुभूति, परिज्ञान होता है उसे अनुभव कहते हैं। मेरा अनुभव है कि भारत की महानता के पञ्च आयाम स्वरूप 1) भारतीय महापुरुष महान् 2) भारतीय आध्यात्म ज्ञान, विज्ञान, संस्कृति, संस्कार, सभ्यता महान् 3) भारतीय भाषा, कला, स्थापत्य, संगीत, नृत्यादि महान् 4) भारतीय भोजन महान् 5) भारतीय सामाजिक संरचना महान् को भारतीय लोग तहेदिल से दिल एवं दिमाग से नहीं मानते हैं जब तक कि विदेश के लोग स्वीकार नहीं करते हैं वह भी दिखावा एवं फैशन-व्यसन के लिए, स्वयं को आधुनिक प्रगतिशील, श्रेष्ठ, ज्येष्ठ सिद्ध करने के लिए मानते हैं न कि यथार्थ से श्रेष्ठ, ज्येष्ठ है, उचित है इस दृष्टि से। भारत में अभी भी सत्यनिष्ठा, प्रगतिशीलता, वैज्ञानिकता, उदारता, प्रामाणिकता, स्वच्छता, समयानुबद्धता, स्वानुशासन, पूर्ण स्वतंत्रता की कमी है। प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक में गुणवत्ता, उत्पादकता, जीवनोपयोगिता, नैतिकता, व्यवहारिकता आदि की कमी है। सब जानते हैं, मानते हैं कि राजनीति व राजनेता भ्रष्ट हैं परंतु इसके साथ-साथ भारतीय कानून भी कागजी, जटिल, कुटिल, अर्थ, समय, जनशक्ति की हानि के लिए हैं। कानून भी

निष्पक्ष, शीघ्र, प्रामाणिक, सरल-सहज, भारतीय परम्परा के अनुकूल नहीं है। धन बल, सत्ता बल, बाहु बल से कानून को कठपुतली की तरह नचाया जाता है। स्वयं वकील से लेकर उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश तक प्रामाणिक नहीं है। समाज में भी समतापूर्ण सामाजिक व्यवस्था, रीति-रिवाज, लेन-देन, उत्सव, समारोह, शादी-विवाह आदि की कमी है। समाज में भी सत्ता, सम्पत्ति, डिग्री, दिखावा, आडम्बर, नकलची, फैशन-व्यसन का साम्राज्य है। सादा जीवन उच्च विचार, प्रामाणिकता, सरलता-सहजता, पवित्रता आदि को जो महत्व मिलना चाहिए वह महत्व आज सत्ता, सम्पत्ति, प्रसिद्धि, डिग्री, राजनेता, सेठ-साहुकार, नौकरशाही से लेकर सरकारी चतुर्थ क्लास के कर्मचारी, नौकरों को मिलता है। जो राजनेता लोक सेवक हैं आज वही लोक भक्षक हैं। जो प्रशासक जनता के व्यवस्थापक है वे आज नौकर होकर शाह (राजा) बन गयें हैं। जो पुलिस जनता के चतुर्थ श्रेणी के सेवक, रक्षक है आज जनता उनके लिए दासी है। क्या यह सब भारत की महानता है ! स्वतंत्रता है ! प्रगतिशीलता है ! सभ्यता है ! संस्कृति है !

धर्म जो सर्वोपरि, पवित्र, समता, सुख, शांति के लिए है उसमें भी इन गुणों की कमी सामान्य नागरिक से लेकर धर्म के ठेकेदार

साधु-संत, आचार्यों तक में पायी जाती है। धर्म में भी उपर्युक्त शिक्षा, कानून, समाज आदि में जो भ्रांतियाँ, कमियाँ है कमबेसी वही पायी जाती हैं। भारत की सर्वोच्च शक्ति आध्यात्मिकता है। आज भारत में आध्यात्मिकता तो अति दूर परंतु नैतिकता, नागरिकता भी सर्वत्र, सर्वदा नहीं पायी जाती है। द्वितीय विश्व युद्ध में हिरोशिमा एवं नागासाकी के ऊपर अणु बम डालकर विध्वंश किया गया तथापि आज जापान आर्थिक व नैतिक दृष्टि से इसलिए श्रेष्ठ है कि जापानी जनता स्व-संस्कृति, परम्परा, राष्ट्रीयता, प्रामाणिकता, कर्तव्यनिष्ठा को सर्वोपरी मानते हैं। भारतीयों को ज्येष्ठ, श्रेष्ठ बनने के लिए पूर्वोक्त भारत के पञ्च आयामों को स्वीकार करना केवल आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य है। अभी भारत में शिक्षा, टैक्नॉलोजी, संचार विभाग, सूचना, प्रोद्योगिकी विकसित होते हुए भी अभी तक भारत विकासशील देश इसलिए है कि भारत में उपर्युक्त कमियाँ हैं। इन कमियों को दूर करके ही भारत विकसित एवं श्रेष्ठ, समर्थ देश बन सकता है। परंतु देखा जाए तो बुरे में भी अच्छे होते हैं इस उक्ति के अनुसार भारत में भी अशिक्षित ग्रामीण किसान आदि व्यक्ति अभी भी शिक्षित, धनी, नगर के व्यक्तियों से श्रेष्ठ-ज्येष्ठ हैं। अभी भी उनमें दया, करुणा, परोपकार, आत्मियता, प्रामाणिकता, अतिथि देव

परायणता, नि:स्वार्थता, सरलता, सहजता, कर्तव्यनिष्ठा, सेवा परायणता आदि सद्गुण पाये जाते हैं। कुछ शिक्षित एवं धनी व्यक्तियों में भी उपर्युक्त गुण पाये जाते हैं परंतु इनकी संख्या अति जघन्य है। हाँ कुछ उच्च विचार संपन्न, उच्च शिक्षित व्यक्ति वह भी विशेषत: आधुनिक वैज्ञानिक बुद्धि सम्पन्न विज्ञान या गणित के विद्वानों में सरलता, सहजता, गुणवत्ता आदि गुण पाये जाते हैं। परंतु थोडे बहुत पढे लोगो में, नगर के लोगों में किसी भी क्षेत्र में (राजनीति से लेकर धर्म क्षेत्र) नेतागिरी करने वालों में तथा नौकरशाही करने वालों में सहजता, सरलता, गुणवत्ता आदि कम पायी जाती है। अभी भी सामाजिकता, राष्ट्रीयता, गुरूभक्ति, अतिथि परायणता, भारतीय सभ्यता संस्कृति परंपरा जो बची हुई है वह सब विशेषत: अशिक्षित ग्रामीण जनों के कारण है। शिक्षा में गुणवत्ता की कमी मैंने हिन्दी प्रदेश में अधिक पायी है क्योंकि हिन्दी प्रदेश में पढाई का ढंग नहीं ढोंग है। यहाँ स्कूल कॉलेज में न शिक्षक सही पढाते हैं न बच्चे सही पढते हैं बल्कि गृह कार्य अधिक देते हैं, ट्यूशन, कोचिंग अधिक पढते हैं, पढाते हैं। इतना ही नहीं शिक्षा की कमी में माता पिताओं को दबाव, अति आकांक्षा, अयोग्यता भी कारण है। येनकेन प्रकार से प्रमाण-पत्र प्राप्त करके नौकरी करना या सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त

करना अथवा शादी का लक्ष्य विशेषत: है। इस संबंधी विशेष जानकारी के लिए मेरे द्वारा रचित 1) सर्वोदय शिक्षा मनोविज्ञान 2) करे साक्षात्कार यथार्थ सत्य का 3) करे साक्षात्कार यथार्थ धर्म, भाव, शिक्षा, संस्कृति का 4) नैतिक शिक्षा सामान्य ज्ञान आदि कृतियों का अध्ययन करे। मेरा अनुभव है कि आधुनिक विज्ञान की विभिन्न शाखायें आंशिक सत्य हैं तो कुछ भ्रमपूर्ण हैं तो कुछ परिकल्पनाओं से युक्त हैं। इसका कारण विज्ञान भौतिक तत्व, इंद्रियजनित ज्ञान, यांत्रिक प्रमाण आदि को ही सत्य मानता है। परंतु सत्य केवल भौतिक नहीं होता जो कि केवल इंद्रियों तथा यंत्रों के माध्यम से परिज्ञात हो जाये। भौतिक स्थूल तत्व तो ब्रह्माण्डीय सूक्ष्म तत्वों का एक बहुत ही छोटा भाग है। इसीलिये विज्ञान को सत्य निष्ठ, परीक्षा प्रधानी, प्रगतिशील बनने के साथ-साथ आध्यात्मिक बनना केवल आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य है। इसके बिना वह अनंत परम सत्य तथ्य को पूर्णत: नहीं जान सकता है। तथापि विज्ञान एवं वैज्ञानिकों में सनम्रता, सत्यग्राहिता, प्रामाणिकता, विश्वबंधुत्व, अहिंसा, असंकीर्णता व्यापकता, सरलता, सहजता है वैसा गुण अधिकांश धार्मिकों में भी नहीं पाया जाता है। इसीलिये मेरा विचार अनुभव है विज्ञान को धर्ममय बनना

चाहिए एवं धर्म को विज्ञानमय बनना चाहिए तथा धार्मिकों को वैज्ञानिक तथा वैज्ञानिकों को धार्मिक बनना चाहिए। जैनधर्म वस्तु स्वभावात्मक, गणितीय, वैज्ञानिक, उदारवादी, समन्वयात्मक, सर्वजीव हितकारी, सर्वजीव सुखकारी, शाश्वतिक धर्म होते हुए भी आज इसका यह वास्तविक स्वरूप सामान्य गृहस्थ से लेकर साधु संत, आचार्यों में भी नहीं पाया जाता है। संकीर्णता, संकीर्ण स्वार्थपरता, पंथवाद, मतवाद, जातिवाद, ख्याति,पूजा,लाभ, प्रसिद्धि, सत्ता, संपत्ति, लोलुपता, ईर्ष्या, द्वेष, भेदभावपना आज धर्म के नाम पर धार्मिक क्षेत्र में पाये जाते हैं। विकृत रूपी बादलों ने जैन धर्म रूपी सूर्य को आच्छादित करके रखा है जिससे उसका प्रकाश स्वच्छता से स्पष्टता से सर्वत्र व्याप्त नहीं हो पा रहा है। जो अनेकांत (सापेक्षसिद्धान्त) स्याद्वाद समस्त वाद-विवादों को निरसन करने वाला है आज स्वयं को अनेकांती कहने वाले जैन लोगों में ज्यादा पंथवाद, मतवाद, लडाई, झगडा, कटुता, वैमनस्यता, संकीर्णता, स्वार्थपरता, विषमतायें पाई जाती हैं। अहिंसा के परिवर्तन में भाव हिसा, वीतरागता के परिवर्तन में वित्तरागता, समता के परिवर्तन में विषमता, विश्व बंधुत्व के परिवर्तन में साधर्मियों में कटुता, अपरिग्रह के परिवर्तन में परिग्रह लोलुपता, सादा जीवन के बदले में

विलासितापूर्ण जीवन, संकीर्ण मानसिकता पाई जाती है। यदि सूर्य को ही राहुकेतु ग्रस रहे हैं तो जुगुनू आदि के बारे में क्या कहा जाये ? मेरी सबसे बडी पीडाओं में से यह भी एक पीडा का कारण है। परंतु सत्ता, संपत्ति, प्रसिद्धि, पंथवाद, मतवाद आदि को चाहने वालों को मेरी यह पीडा, उदारता, उत्कृष्टता समझ में नहीं आती है। यह भी एक चिंता एवं चिंतन का विषय है। परंतु घन अन्धकाररूपी रात्रि के अंतिम प्रहर में जिस प्रकार सूर्योदय के पहले लालिमा दिखाई देती है उसी प्रकार कुछ वर्षों से मेरी उदात्त, व्यापक, सूक्ष्म भावनाओं को कुछ दिगम्बर, श्वेताम्बर, हिन्दू, देश-विदेश के प्रबुद्ध विद्वान् समझने लगे हैं जिससे वे मेरी भावनाओं को मूर्तरूप देने के लिए तथा प्रचार-प्रसार करने के लिए तन-मन-धन, समय, शक्ति से निस्वार्थ रूप से संलग्न हैं। मेरे विभिन्न अनुभवों को विस्तृत रूप में जानने के लिए मेरी 1) अनुभव चिंतामणि 2) नैतिक शिक्षा सामान्य ज्ञान 3) करें साक्षात्कार यथार्थ सत्य का 4) जैन धर्मावलम्बियों की दशा-दिशा एवं आशा आदि पुस्तकों का अध्ययन करें।

5) अन्त: प्रेरणा, अन्त: प्रज्ञा एवं पूर्वाभास :-

I अन्त: प्रेरणा :- मेरे बाल्यकाल से प्राय: मेरी उम्र जब 2½

वर्ष की थी तब से मुझे सामान्य बच्चों से कुछ अलग पूर्व संस्कार से अनुभव, ज्ञान एवं व्यवहार होने लगा था। मुझे मेरी उम्र 2, 2½ वर्ष की थी तब से लेकर अभी तक की प्राय: हर प्रकार की स्मृति मेरे मस्तिष्क में सुरक्षित है। मुझे लगभग 2 वर्ष उम्र की भी घटनायें प्राय: चित्र सहित (दृश्य) याद है। मेरी छोटी बहिन एक तरफ से और मैं दूसरी तरफ से एक साथ माँ का स्तनपान करते थे यह घटना भी दृश्य सहित याद है। मैं 3-4 साल की उम्र से ही अन्त: प्रेरणा से, स्वेच्छा से प्राय: हर कार्य करने लगा था। यथा - भोजन के पहले हाथ, पैर, मुँह धोना, कुल्ला करना, स्वयं के कपडे धोना, सुखाना, पहिनना, स्नान करना, बिस्तर बिछाना-समेटना आदि आदि। मैं 5 वर्ष की उम्र के बाद स्कूल में पढने गया। मेरी बुद्धिलब्धि, शालीनता, अनुशासन प्रियता से मेरे शिक्षक मुझे प्रथम कक्षा से एक साथ तीसरी कक्षा में प्रवेश दिला दिये। मैंने तीसरी कक्षा से ही स्वयं पढाना, दुसरों को नि:शुल्क पढाना, स्कूल का हर कार्य यथा- सफाई से लेकर अनुशासन तक स्वेच्छा से करना प्रारम्भ कर लिया था। मैं विद्यार्थी जीवन में हर वर्ष मॉनीटर रहा हूँ। गुरुजी के अनुपस्थिति में कक्षा के अनुशासन से लेकर पढाई तक मैं स्वेच्छा से करता था इसके लिए कक्षा के हर शिक्षक मुझे योग्य मानकर पहले से ही

अनुमति देते थे। मैंने बाल्यकाल से स्वेच्छा से अनुशासन पालना, समयानुकूल कार्य करना, शांति से रहना, परोपकार करना, सेवा करना, सहयोग करना प्रारम्भ कर लिया था। हमारे कक्षा के विभाग से लेकर स्कूल के शिक्षक एवं विद्यार्थियों को मैं अपना मानता था और वे मुझे सम्मान देते थे। मैं केवल पढाई में ही अव्वल नहीं रहा हूँ अपितु शालीनता, अनुशासन, शांति, व्यवस्था आदि में भी ज्येष्ठ-श्रेष्ठ रहा हूँ। इसलिए मेरे सहपाठी से लेकर बडे, छोटे विद्यार्थी मुझे सम्मान देते थे तथा मुझसे डरते थे।

मेरी बुद्धिलब्धि अच्छी होने के कारण तथा ध्यान पूर्वक पढने लिखने के कारण शिक्षक जो पढाते थे वह सब याद होने से मैं तीसरी कक्षा तक घर में कम ही पढता था तथा स्वयं विभिन्न खेल सामग्री एवं उपकरण बनाकर खेलता था। तैरना एवं भ्रमण करना मेरे सबसे प्रिय खेल हैं। गर्मियों में एक दिन शाम को खाना खाकर मैं लेटा हुआ था मेरा मझला भाई मुझे सुनाते हुए कहने लगे - ''यह तो खाता है एवं सोता रहता है।'' उसके बाद मेरे में जो सुप्त ऊर्जा थी वह जागृत हो गई उस दिन से लेकर लगातर अभी तक मैं स्वेच्छा से अध्ययनशील हूँ। मैं ग्रीष्मावकाश में या विशेष छुट्टी में भी नवीन-नवीन साहित्यों का स्वेच्छा से अध्ययन करता था। मैं दूर-दूर विभिन्न स्थानों में परिभ्रमण करने के लिए जाता था। छह वर्ष की आयु से ही मैं अकेला ही एकांत में अध्ययन, मनन, चिंतन करता हूँ एवं शयन भी एकांत में ही करता हूँ। छोटी उम्र से ही मैं अकेले दूर-दूर भ्रमण करता था और पर्वत, नदी, जंगल आदि प्रशांत निर्जन स्थानों में जाकर मैं ध्यानादि भी करता हूँ। यह सब कार्य मैं स्वेच्छा एवं निडरता से करता हूँ। इसलिए मुझे एकांत, प्रशांत स्थान अति प्रिय है। केवल अध्यापन, प्रवचन, सामुहिक तत्त्व चर्चा, शिविर, संगोष्ठी आदि में सबके बीच में रहना अच्छा लगता है, अन्य समय में मुझे एकांत ही प्रिय है। मैं बाल्यकाल से मितभाषी (कम बोलने वाला) हूँ। हाँ धार्मिक, आध्यात्मिक, वैज्ञानिक, राष्ट्रीय चर्चाओं में आनन्द आता है परंतु गप्पबाजी, अन्याय, असत्य का पक्ष लेना, अनुशासन हीनता, फैशन-व्यसन, दिखावा, आडम्बर, लडाई-झगडा, गंदगी, प्रदूषण, भीड-भाड आदि कतई पसंद नहीं है। मैं स्वानुशासी, स्वतंत्र विचार सम्पन्न एवं शालीन होने के कारण शिक्षक से लेकर आध्यात्मिक गुरु को भी मुझे विशेष अनुशासित करने की आवश्यकता नहीं पडी है। मैं अकेला ही दूर-दूर परिभ्रमणार्थ जाता था एवं मुझे पूर्ण स्वातंत्र्य होते हुए भी कभी भी मैंने फैशन-व्यसन, आडम्बर, भ्रष्टाचार, अनैतिक व्यवहार, नशीली वस्तुओं का सेवन आदि नहीं किया इतना ही नहीं मैं कभी भी होटल का भोजन भी नहीं करता था। इसके कई कारणों में से एक कारण है कि मैं बाल्यकाल से ही वैज्ञानिक बुद्धि सम्पन्न रहा हूँ। तीसरी कक्षा से ही नैतिक शिक्षा, आयुर्वेद, धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन करने लगा था। मैं दूर-दूर प्रवचन, नाटक, ओपन थियटर, ड्रामा, साधु संगति, सामाजिक एवं राष्ट्रीय कार्यक्रमों में जाता था परंतु परिवार में प्रतिबंध नहीं होने पर भी मैं सिनेमा देखने नहीं जाता था। क्योंकि सिनेमा में वैज्ञानिकता, राष्ट्रीयता, धार्मिकता, नैतिकता नहीं होती है और जिसमें उपर्युक्त गुण नहीं होते हैं उसका मैं स्वेच्छा से बहिष्कार कर देता हूँ। मैं बाल्य विद्यार्थी जीवन से ही वैज्ञानिक विचारधारा वाला, प्रकृति प्रिय, आत्मविश्वासी एवं बोल्डनेस से युक्त होने पर भी सादा जीवन उच्च विचारों को स्वेच्छा से अपनाया हूँ और आगे भी अपनाता रहुँगा। यहाँ तक कि मैंने आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत छोटी सी उम्र में जब मैं आठवीं कक्षा में पढता था तब विद्यार्थी अवस्था में आत्मसाक्षी पूर्वक स्वेच्छा से लिया था। मैं विद्यार्थी जीवन से ही बडे-बडे नगरों एवं बडे-बडे लोगों श्रीमान्, धीमानों के सम्पर्क में आने पर भी मैं दूसरों का अन्धानुकरण किसी भी प्रकार से नहीं करता हूँ। मेरी बुद्धिमत्ता, तर्क शक्ति एवं मेरे साहस के कारण मेरे सादे जीवन एव उच्च विचारों की खिल्ली किसी ने नहीं उडाई है, कभी भी इसे गलत नहीं मानते हैं। यदि कोई किसी प्रकार कुतर्क करता हो तो मैं उसके एक कुतर्क को सौ तर्कों से काट देता हूँ। भले मैं कभी कुतर्की नहीं रहा हूँ सत्य को असत्य एवं अन्याय को न्याय रूप में स्वीकार नहीं किया है तथा समता, शालीनता में ही बाल्यकाल से जीवन जी रहा हूँ। वज्र के समान कठोर होने पर भी पारदर्शी एवं चिकना हूँ। मैं न किसी का अपमान करता हूँ न अपमान कारक कार्य करता हूँ, न किसी के अपमान कारक व्यवहार को स्वीकार ही करता हूँ। परंतु मेरी यथार्थ गलती को समझ में आने पर तत्काल स्वीकार करता हूँ एवं पुन: उस गलती को दोहराता नहीं हूँ। मैं विद्यार्थी जीवन से ही प्रकृति प्रेमी, पुस्तक प्रेमी एवं बालक प्रेमी रहा हूँ इसलिए मेरे घर के आसपास विभिन्न पेड लगाया था। मैंने अध्ययन कक्ष के सामने नारियल का पेड लगाया था। मैं पेडो को बालकों के जैसे प्रेम से पालन पोषण करता था। एक दिन जब मैं शाम को स्कूल से वापिस आया तब मैंने देखा कि नारियल के पत्तों के अन्दर कुछ मिट्टी पडी हुई थी। मुझे बहुत दु:ख हुआ। मैं पेड के पास खडे होकर जोर-जोर से चिल्लाने लगा कि मेरे पेड के ऊपर मिट्टी किसने और क्यूँ डाली है। मैं कुछ समय तक चिल्लाता रहा। मेरे पिताजी वहीं शांत, निर्विकार अवस्था

में खडे हुए सुन रहे थे। कुछ समय के बाद वे शांति से बोले मैंने ही मिट्टी डाली है। यह सुनते ही जैसे मेरे सिर के ऊपर किसी ने पहाड डाल दिया हो। मुझे अत्यन्त दु:ख एवं पश्चात्ताप हुआ। मैं रोने लगा एवं शाम का भोजन बिना किये ही देर रात तक रोते हुए सोचने लगा कि हाय धिक्कार है मुझे जो बिना जाने, समझे, विचार किये मैंने इस तरह का व्यवहार किया तथापि मेरे पिताजी कितनी शांति से सुने और उत्तर भी शांति से ही दिया। तब से मैंने शिक्षा ली कि बिना सोच विचार के निर्णय लिए बिना किसी को कुछ भी नहीं बोलूँगा, क्रोध नहीं करुँगा। तबसे मैंने कभी भी इस तरह का कार्य नहीं किया। भले मैंने कभी भी अन्याय, अत्याचार को सहन नहीं किया परंतु बिना निर्णय किसी को भी यदवा तदवा नहीं बोलता हूँ और न ही क्रोध करता हूँ। परंतु दूसरों की गलतियों को न मैं स्वीकार करता हूँ अपरंच योग्य समय आने पर अवश्य जताता, बताता हूँ।

पहले भी मैंने वर्णन किया था कि तीसरी कक्षा से ही मैंने धार्मिक, नैतिक, राष्ट्रीय पुस्तकों का अध्ययन करने लगा था। मैं विद्यार्थी जीवन से लेकर अभी तक लगभग रात को 12-1 बजे अध्ययन करके सोता हूँ। 7 वी बोर्ड की परिक्षा थी। हमारे एक नए शिक्षक आये हुए थे। मैं प्राय: 1 बजे अध्ययन करके बोर्डिङ्ग में

शयन कर रहा था। मैं अच्छा विद्यार्थी होने के कारण मेरी सम्पूर्ण व्यवस्था निशुल्क होती थी। नये शिक्षक रात के 2½ - 3 बजे आकर बेंत से सब विद्यार्थियों के साथ-साथ मुझे भी जगने के लिए पीटा। मैं कक्षा के समय नम्रता से उन नवीन शिक्षक के व्यवहार के बारे में प्रधानाध्यापक को बता दिया। प्रधानाध्यापक ने नवीन शिक्षक को संपूर्ण जानकारी दी। वे आकर मुझसे क्षमा माँगे। मुझे विद्यार्थी जीवन से लेकर अभी तक इसके अलावा कभी भी मार नहीं पडी है। इतना ही नहीं जब मैं विद्यार्थी जीवन में अकेला ही दूर-दूर तक महिनों-महिनों तक भ्रमण किया करता था तब भी बिहार जैसे प्रदेश में कोई दुर्घटना नहीं हुई है। इतना ही नहीं मेरे व्यवहार, व्यक्तित्व आदि से प्रभावित होकर दूसरे लोग मेरे रहने की यहाँ तक कि भोजनादि की निशुल्क व्यवस्था करते थे। मैं खुद भी भ्रमण के समय में रोगी, असहायों की सेवा करता था। एक बार मैंने देखा एक बुढिया लकडी का गठ्ठा लेकर जा रही है तब मैंने पता लगाया कि इस अवस्था में यह लकडी का गठ्ठा लेकर क्यों जा रही है। इसका कारण यह था कि उसका जवान इकलौता बेटा यक्ष्मा (T.B.) रोग से ग्रसित है। मैं पता लगाते हुए उसकी कुटिया में पहुँचा उसका युवक बेटा खटिया पर कंकाल रूप में पडा हुआ था। मुझे बहुत दु:ख हुआ। मैं रोज

केला आदि एवं औषधी लेकर उनके यहाँ जाता था तथा उसकी सेवा करता था। इतना ही नहीं पशु-पक्षी, गरीब यहाँ तक की वृक्षादि की भी सेवा में मुझे आनंद व संतुष्टी अनुभव होती है। यह सब कार्य दूसरे की प्रेरणा, धार्मिक ग्रंथों के अध्ययन से नहीं करता हूँ यह सब कार्य बाल्य काल से स्वेच्छा से करता हूँ। मेरी जो कुछ अच्छी प्रवृत्तियाँ हैं वे सब बाल्यकाल से ही अन्त: प्रेरणा से ही है। मैं धर्म को विश्वास एवं स्वेच्छा से आचरण करने का विषय मानता हूँ न कि विवशता से दिखावा करने का विषय मानता हूँ। पूर्व वर्णित बाल्यकाल से लेकर अभी तक जो सब घटनायें, कार्य हैं वे सब अन्त: प्रेरणा से ही कर रहा हूँ, अभी भी कर रहा हूँ और आगे भी करुँगा। मैं अंधविश्वास से, दिखावे से, दबाव से अन्त प्रेरणा व अन्त:चेतना को कुचल कर कुछ भी कार्य करने में असमर्थ हूँ। मुझे चाहे कोई गलत माने या सहीं माने, निंदा करें या प्रशंसा करें, सहयोग करें या विरोध करें तथापि मैं किसी के प्रति खोटा भाव नहीं रखता हूँ न क्षति पहुँचाता हूँ। परंतु महान् लक्ष्य एवं सत्य, समता एवं शांति के पथ पर अविराम गति से चलता रहता हूँ चाहे मेरी गति धीमी क्यों न हो। कुछ उदाहरण से स्पष्ट करता हूँ 1) मैं जब प्राय: 3-4 वर्ष का शिशु था मेरे पिताजी के साथ मेरे मामा के यहाँ गया था। विशाल केनाल

में पानी बह रहा था और हम केनाल के पाल में जो रास्ता बना हुआ था उस रास्ते से वापिस घर आ रहे थे। मध्यान्ह का समय था, गर्मी पड रही थी उसी बीच विशाल आम के तीन पेड थे उस पेड के नीचे एक व्यक्ति सो रहा था। नये 10-20-100 रुपये के नोट बिखरे पडे थे। अभी के रुपये के मूल्य से उस समय उन रूपयों का मूल्य 20-30 गुणा आधिक था। मैंने सभी रुपयों को इकट्ठा किया और स्वेच्छा से उस सज्जन को जगाकर तथा उन्हें देकर पिताजी के साथ मैं घर वापस आया। 2) मैं जब ब्रह्मचारी था कुछ साधुओं के साथ मैं सोनागिरी जा रहा था। रास्ते में एक बटुआ (पर्स) मिला। उस पर्स को मुझे किसी ने उठाने के लिए बोला तब मैंने मना किया और बोला की मैं इसे छुऊँगा भी नहीं। साधु-संत मेरे स्वभाव से परिचित थे अत: उन्होंने मुझे प्यार से समझाया और कहा कि यह पर्स ले लो जिसका हो उसे लौटा देना। मैंने कहा दूसरों की कोई भी चीज चाहे रखी हुई, भूली हुई, पडी हुई, बिना अनुमति से लेना चोरी है तथापि साधु के आग्रह के कारण मैंने बिना मन से उस पर्स को उठाया व चैन खोलकर देखने पर पाया कि उसमें 20-50 व 100 रुपयों के नोट भरे हुए थे। प्राय: एक किलो मीटर तक मैं सोचता ही गया। मैंने उस पर्स को पुन: जहाँ पडा था वही पर रख दिया। मैं जीवन में दूसरों को ठगना,

चोरी करना, धोखाधडी, लडाई-झगडा, अपमान, तिरस्कार, अन्याय, अत्याचार न करता हूँ न स्वीकार करता हूँ। 3) लावा (राजस्थान) चातुर्मास के अवसर पर मेरे कुछ ग्रंथों का विमोचन था। मैंने वहाँ के श्रावकों को बताया कि कुछ ग्रंथों का विमोचन करना है। श्रावकों ने विचार-विमर्श करके मेरे पास आकर अनुरोध किया ''गुरुदेव जितने ग्रंथों का विमोचन है उसके लिए हमें कितना रुपया देना पडेगा''? वे इन ग्रंथों के प्रकाशन का धन देना चाहते थे। मैंने कहा आपको एक भी पैसा नहीं देना है। द्रव्यदाता और कोई है। आपको तो केवल कार्यक्रम में विमोचन ही देखना है। वहीं पर मेरे एक शिष्य आचार्य कुशाग्रनंदी ने शिविर के लिए मेरा तीन-चार हजार रुपयों का साहित्य मंगवाया था। मुझे जब पता चला की लातुर (महाराष्ट्र) में भूकंप हुआ है तो मैंने सूचित किया कि यह धन वहाँ के भूकंप पीडितों को दान में दे देना। परंतु वहाँ के श्रावकों ने ड्राफ्ट बनाकर मेरे पास रुपया भेज दिया मैं उसे मेरे साहित्य प्रकाशन में भी नहीं लिया और वहाँ की पाठशाला के लिए दे दिया। क्योंकि एक बार वचन से दान देने की घोषणा करने के बाद स्वीकार करना भी निर्माल्य ग्रहण करने के बराबर है। 4) मैं जब अयोध्या की किताब लिख रहा था तब यह विषय श्रावकों को पता चला। कुछ वरिष्ठ श्रावक आकर मुझे बोलने लगे यह किताब लिखना ही मत। लिखना है तो प्रकाशित मत करना। प्रकाशित करना है तो नाम नहीं देना। नहीं तो पुलिस आकर जेल में ले जाएगी। अनेक बार भयभीत कराने पर भी मैंने उसे पूर्ण किया। उसका प्रकाशन राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ ने किया। उसका विमोचन पदमपुरा, जयपुर के विशाल पञ्चकल्याण महोत्सव में डॉ. गिरिजा व्यास (सांसद) ने किया और उसकी अधिकांश प्रतियों को केंद्र सरकार से लेकर राज्य सरकार, सामान्य न्यायालय से लेकर उच्च न्यायालय एवं पार्टियों व सामाजिक संगठनों को संघ ने भेजा। जिसने भी किताब को पढा सभी ने लोहा माना। गुलाब कोठारी (राजस्थान पत्रिका के संपादक) की अयोध्या संबंधी किताब जब मेरे पास आई तथा मेरी किताब उनके पास गई तब उन्होंने कहा कि मेरी किताब में घटनाओं का वर्णन है। परंतु आचार्य श्री की किताब में अकाट्य प्रमाण है। इस किताब को लेने व मुझसे चर्चा करने साध्वी ऋतंभरा मेरे पास उदयपुर में आयी। संघ के बडे-बडे कार्यकर्ता भी मानते हैं कि आचार्य श्री ने जो विषय इस किताब में दृढता से लिखा है हम ऐसे विषय भाषण में बोलने से घबराते हैं व असमर्थ हैं। 5) आचार्य विद्यासागर जी ने 25-30 वर्ष पहले मिथ्यात्व को अकिञ्चित्कर के रूप में प्रतिपादित किया। उसके पक्ष-विपक्ष में अनेक वर्षों तक शीतयुद्ध चलता रहा। मैं स्वयं 1983 में तुमकुर चातुर्मास के अंतर्गत उनके पास कई प्रश्न भेजे थे। उन्होंने प्रश्न पढे और कहा उपाध्याय कनकनंदी जी को बताये कि इनका उत्तर धवल, जयधवल में मिलेगा। जब मैं धवल, जयधवल का अध्ययन-अध्यापन किया तब मिथ्यात्व को आस्रव, बंध एवं संसार के लिए मूल कारण पाया। इसलिए मैंने मिथ्यात्व अकिञ्चितकर नहीं है परंतु आस्रव, बंध, संसार के लिए अतिकर है इसे सिद्ध करने के लिए ''दंसण मुलो धम्मो तहा संसार मूलहेदू मिच्छत्तं'' पुस्तक की रचना की। जब कुछ दिग्गज पंडितों को पता चला कि मैं इस संबंधी पुस्तक लिख रहा हूँ तब वे मुझे नहीं लिखने के लिए अनुरोध, आग्रह के साथ-साथ भयभीत करने की चेष्टा की। मैं पुस्तक में आचार्य विद्यासागर जी का नाम उल्लेख पूर्वक अनेकों प्रश्नों सहित पुस्तक की रचना की। प्रकाशन के बाद मैं स्वयं कुछ प्रतियाँ आचार्य विद्यासागर जी के पास प्रेषित किया तथा बाद में संस्था से 21 प्रतियाँ कटनी में मंगाकर विद्वत् चर्चा हुई और मेरे पास रिपोर्ट भेजा गया कि इस विषय को यही समाप्त करना चाहिए। मैंने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित किया कि ''हमें जिनवाणी चाहिए न कि जनवाणी''। हम जिनवाणी का आदेश स्वीकार करते हैं न कि दूसरों का। उसके बाद यह विषय शांत हो गया।

इस प्रकार अध्ययन-अध्यापन, लेखन, कक्षा, प्रवचन, शिविर, संगोष्ठी, आहार-विहार, चातुर्मास, मौन, एकांत सेवन आदि उपर्युक्त वर्णित सम्पूर्ण विषय अन्त:प्रेरणा से स्वेच्छा, से करता हूँ, कर रहा हूँ और आगे भी करूँगा। भले उसके लिए बाह्य द्रव्य, क्षेत्र, काल, व्यक्ति, आवश्यकता आदि का भी उचित योगदान है और रहेगा भी।

स्वदोषों का अन्त:प्रेरणा से परिशोधन :-

मैं जिस प्रकार से उपर्युक्त कार्यों को अन्त:प्रेरणा से करता हूँ उसी प्रकार से स्व-दोष, गलतियों को भी अन्त:प्रेरणा, अन्त:प्रज्ञा से जानकर दूर करता हूँ। वैसे तो मैं जानबूझकर दूषित मनोभाव से किसी भी निर्दोष प्राणी के प्रति दुर्व्यवहार बाल्यकाल से भी नहीं करता हूँ। हाँ जो स्वयं दोषी है या दूसरों के प्रति अथवा मेरे प्रति दोष कारक, अयोग्य, दु:खजनक व्यवहार करते हैं उसे मैं सही नहीं मानता हूँ तथा द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के अनुसार उसे जताने के लिए, बताने के लिए एवं परिशोधन-दूर करने के लिए बोलता हूँ, लिखता हूँ परंतु प्रतिशोध के लिए कदापि नहीं। ऐसा करने पर मुझे आत्म संतुष्टी होती है, गौरव अनुभव होता है। यदि ऐसा नहीं करता हूँ तो मुझे

आत्मग्लानि होती है कि मैंने दोष को दूर करने के लिए, दूसरों के दुःख दूर करने के लिए योग्यतानुसार, स्वेच्छा से काम नहीं किया, उसके लिए योगदान नहीं दिया। मैंने जो उपर्युक्त असत्य, अन्याय, अत्याचार, भ्रष्टाचार, पापाचार, हिंसा, फैशन-व्यसन आदि के विरुद्ध में कार्य किया और अभी कर रहा हूँ और आगे भी करूँगा यह सब ऐसी ही शुभ भावना से प्रेरित होकर करता हूँ न कि किसी भी प्रकार के अशुभ भाव या व्यक्तिगत अथवा सामुहिक द्वेष, ईर्ष्या या वैरत्व से। दूसरों के दोष कारक व्यवहारादि से मुझे जितनी आत्मग्लानि होती है उससे अत्याधिक असहनीय आत्मग्लानि, अशांति, तनाव, चंचलता, विक्षोभ, शारीरिक पीडा आदि होती है जब मुझसे दूसरों के प्रति मन-वचन-काय से किसी भी प्रकार का अयोग्य कार्य होता है या करवाता हूँ या अनुमोदना करता हूँ। यह आत्मग्लानि आदि और भी भयंकर घनीभूत होती है जब किसी निर्दोष प्राणी (मनुष्य से लेकर क्षुद्रजीव) के प्रति अयोग्य व्यवहारादि हो जाते हैं। मुझे तब तक शांति नहीं मिलती जब तक मैं पवित्र, सरल-सहज भाव से उससे क्षमा प्रार्थना करके दोष के बदले में उसके प्रति अधिक अच्छाइयाँ, उपकार, सेवा, सहयोग नहीं कर लेता हूँ। इस कारण से मैं जानबूझकर दूषित भाव से कोई कार्य स्व-पर प्रति नहीं करता हूँ

और करने पर (यथार्थ कहें तो किसी कारण से हो जाने पर) स्वेच्छा से क्षमा मांगता हूँ और क्षतिपूर्ति से भी अधिक उपकारादि करता हूँ। **मुझसे अच्छा काम (विचार, कथन, व्यवहार) या गलत कार्य हुआ है तो मुझे स्वयं ज्ञात हो जात है। जिस कार्य से मुझे शांति, संतुष्टी, स्फूर्ति, स्थिरता, प्रसन्नता, ज्ञान की प्रखरता, तन-मन में हलकापन आदि अनुभव में आते हैं तो वह कार्य अच्छा है और जिस कार्य से उपर्युक्त अच्छे अनुभव से विपरीत अनुभव होते हैं वह कार्य बुरा है। अर्थात् अच्छे कार्य का फल शांति है तो बुरे कार्य का फल अशांति है या अच्छे कार्य कारण है तो शांति कार्य है और बुरे कार्य कारण है तो अशांति कार्य है। यह कार्य कारण सिद्धान्त या क्रिया प्रतिक्रिया सिद्धान्त मेरे स्व-प्रवृत्त अनुभव से अनुभूत भी है। मैं बाल्यकाल से इस कारण से दूसरों के बिना प्रेरणा या उपदेश अथवा अनुशासन से मैं स्वयं अच्छा कार्य करता हूँ एवं बुरे कार्य नहीं करता हूँ।**

2) **अन्त:प्रज्ञा -** पूर्व में भी मैंने वर्णन किया है कि पूर्व जन्म के संस्कार के कारण अनेक सत्प्रवृत्तियाँ मेरे अन्दर बाल्यकाल से ही पनपने लगी थी। अन्त:प्रज्ञा, प्रतिभा से मुझे जो कुछ धर्म, दर्शन, विज्ञान, राजनीति, कानून, समाज व्यवस्था, भविष्य कालीन घटनायें

आदि संबंधी यथार्थ-अयथार्थ कमियों एवं भ्रांतियों के बारे में दूसरों से बिना सुने व ग्रंथों से बिना पढे भी ज्ञान हो जाता है। उस संबंधी जब मैं कुछ दूसरों को बताता हूँ, पढाता हूँ या प्रवचन में बोलता हूँ तो अधिकांश व्यक्ति उसे समझते नहीं हैं या गलत मानते हैं। परंतु धीरे धीरे जब मैं विशेष श्रेष्ठ से श्रेष्ठतम ग्रंथों का अध्ययन करता हूँ या वैज्ञानिक अनुसंधान होता जाता है अथवा सामाजिक परिवर्तन, राजनैतिक या कानूनी परिवर्तन होते हैं तब मेरे अन्त:प्रज्ञा से जायमान विचार धीरे धीरे सत्य सिद्ध होते जाते हैं। इस संबंधी विशेष परिज्ञान के लिए मेरे द्वारा लिखित 1) विश्व विज्ञान रहस्य 2) भविष्य फल विज्ञान 3) स्वप्न विज्ञान 4) ब्रह्माण्डीय जैविक, भौतिक एवं रसायन विज्ञान 5) अनन्त शक्ति सम्पन्न परमाणु से लेकर परमात्मा 6) सर्वोदय शिक्षा मनोविज्ञान आदि कृतियाँ अवलोकनीय है। तथापि कुछ संक्षिप्त उदाहरण यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ। यथा - 1) विज्ञान में वर्णित अणु/परमाणु को मैं अखंडित शुद्ध नहीं मानता था। 2) प्रकाश की गति परम नहीं मानता था। 3) डार्विन के विकासवाद को संपूर्ण सत्य नहीं मानता था। 4) फ्रायड के मनोविश्लेषण को एकांगी मानता था। 5) भारतीय आर्य विदेश से आये ये नहीं मानता था। 6) मनुष्यों के पूर्वज बंदर हैं न पहले मानता था न अब मानता हूँ। 7) अंधकार एवं

छाया को मैं पहले से पुद्गल मानता था। आदि विषय पहले स्कूल, कॉलेज की पुस्तकों में वर्णित नहीं था और देश विदेश के वैज्ञानिक शोधार्थी, लेखक के द्वारा प्रचारित-प्रसारित नहीं किया गया था परंतु धीरे धीरे मेरी अन्त:प्रज्ञा से जो विचार उत्पन्न हुए थे, हो रहे हैं वह सिद्ध होते जा रहे हैं। इसी प्रकार भारतीय शिक्षा पद्धति, विषयवस्तु, उद्देश्य, परिणाम, कानून, राजनीति, संविधान आदि के बारे में जो विचार पहले ही मेरे अन्त:प्रज्ञा से उत्पन्न हो रहे थे, अभी हो रहे हैं वही अब धीरे धीरे सिद्ध होता जा रहा है।

3) उपर्युक्त अन्त:प्रेरणा, अन्त:चेतना से अनुश्रुत मुझमें पूर्वाभास की भी चेतना है। मैं बाल्य काल से गणितीय, वैज्ञानिक यथार्थपरक परीक्षा प्रधानी, प्रायोगिक व्यक्तित्व का धनी होने के कारण मैं किसी भी विषय को केवल सुनकर या पढकर विश्वास नहीं करता हूँ जब तक कि उसकी यथायोग्य सत्यता, प्रमाणिकता मुझे ज्ञात नहीं हो जाती है। इसलिए मैं शकुन, स्वप्न, ज्योतिष, भविष्यवाणी आदि के ऊपर विश्वास नहीं करता था। यहाँ तक कि जिस विषय को मुझसे आयु, शिक्षा आदि में बडे लोग तथा मेरे शिक्षक भी मानते थे मैं उसे भी नहीं मानता था। परंतु निषेध में आकर्षण होता है इस नियम के अनुसार उपर्युक्त शकुन, स्वप्न आदि मेरे जीवन में बार बार सत्य

सिद्ध हुए; मानो मुझे बता रहे हो कि हम सत्य हैं, हमें स्वीकार करो। भले मैं किसी विषय को पहले अंधविश्वास रूप में विश्वास नहीं करता हूँ परंतु जब मुझे किसी विषय की सत्यता जितने अंश में भी ज्ञात हो जाती है उसको उतने अंश में मैं तत्काल स्वीकार कर लेता हूँ। पूर्ण सत्य है तो पूर्ण रूप में, आंशिक सत्य है तो आंशिक रूप में। इस दृष्टि से मैं स्वप्न, शकुन, पूर्वाभास आदि को धीरे धीरे उसकी प्रमाणिकता के अनुसार स्वीकार करते जा रहा हूँ। मुझे प्राय: जो स्वप्न, शकुन, अन्त:प्रेरणा, अन्त:चेतना तथा पूर्वाभास होते हैं वे प्राय: मेरे अनुभव के अनुसार सत्य सिद्ध होते हैं। इसलिए जिस विषय को मैं बाल्य विद्यार्थी अवस्था में नहीं मानता था उसके ऊपर मैंने विशाल ग्रंथों की रचना की है। यथा - 1) स्वप्न विज्ञान 2) भविष्य फल विज्ञान 3) सर्वाङ्ग विज्ञान की वैज्ञानिक गवेषणा (भाव, भाग्य एवं अङ्ग विज्ञान) की रचना की है। जिसे विशेषत: वैज्ञानिक, प्रोफेसर्स आदि अध्ययन करते हैं एवं शोध कार्यों मे प्रयोग लेते हैं। इतना ही नहीं मैं स्वयं इसके अनुसंधान में सतत् लगा हुआ हूँ। मुझे स्वप्न, शकुन, अङ्ग स्फुरण, छाया पुरुष दर्शन, भावात्मक शकुन एवं पूर्वाभास से स्व-पर राष्ट्र, अतिवृष्टि-अनावृष्टि, भूकंप, अग्निदाह, राजनैतिक पार्टी के जय-पराजय, रोग, मृत्यु आदि का पूर्वाभास हो जाता है। मैं दीर्घकाल से अनुभव कर रहा हूँ कि मेरा पूर्वाभास ज्योतिषों एवं वैज्ञानिकों की भविष्य वाणी से भी सत्य सिद्ध होते हैं। ये सब होते हुए भी मैं प्राय: करके न तो दूसरों का हाथ देखता हूँ, न भविष्य बताता हूँ, न ही प्रचार-प्रसार करता हूँ। अति आवश्यक होने पर मैं कभी कभी संघस्थ साधुओं को या मेरे प्रबुद्ध वैज्ञानिक शिष्य आदि को बताता हूँ। जिससे उसके ऊपर और अधिक अनुसंधान हो तथा सत्य-तथ्य का परिज्ञान हो, जिसका सदुपयोग स्व-पर, विश्व कल्याण के लिए हो। सामान्य जनता को यह सब बताने पर मेरे समय, साधना और लक्ष्य में व्यवधान पडेगा इसलिए नहीं बताता हूँ। अभी कुछ वर्षों से पहले जो थोडा कुछ बताता था उससे भी अभी बहुत कम बता रहा हूँ और भी आगे कम करता जा रहा हूँ क्योंकि मैं स्वयं इसको अनुसंधानात्मक प्रायोगिक ज्ञान के साथ साथ इस शक्ति को बढाना चाहता हूँ। मैंने विभिन्न ग्रंथों में पढा तथा अनुभव किया कि जिसके भाव सरल, सहज तथा पवित्र होते हैं उनके स्वप्न, शकुन, अङ्ग स्फुरण आदि सही सिद्ध होते हैं और उन्हें पूर्वाभास भी होते हैं। छाया पुरुष तो उपर्युक्त गुण होने के साथ साथ जिनका मन स्थिर होता है, उन्हें ही दिखाई देता है। सामान्य लोगों के स्वप्न, शकुन आदि सत्य नहीं होते हैं और सामान्य लोगों की इस संबंध में जो धारणाएँ है वे प्राय: सब गलत धारणाएँ हैं। स्वप्न आदि योग, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव आदि चतु:आयाम सिद्धान्त से ही सत्य या असत्य सिद्ध होते हैं। प्रकारान्तर से यह कार्य भी कारण संबंध, सापेक्ष सिद्धान्त से संबंधित है। मुझे स्वप्न, शकुन, अङ्ग स्फुरण, छाया पुरुष दर्शन, पूर्वाभास आदि के कुछ वैज्ञानिक कारण एवं कार्य कारण संबंध का तो ज्ञान है और कुछ का नहीं है जिसका मैं स्वयं अनुसंधान कर रहा हूँ। भले कार्य कारण संबंध का मुझे पूर्ण ज्ञान नहीं है परंतु उसका परिणाम जो सत्य सिद्ध होते हैं उससे मैं इन सबको जानने के लिए और भी ज्यादा उत्साहित हूँ। अधिकांश ज्योतिष, भविष्य वेत्ता आदि दूसरों को प्रलोभित करके या भयभीत करके दूसरों का शोषण करते हैं यथार्थ से उन्हें इन सब का परिज्ञान कम है और उनकी भविष्यवाणियाँ कम सिद्ध होती हैं।

मेरे अनुभव के संक्षिप्त सार

कटु अनुभव - मैंने पूर्व में भी मेरे विभिन्न अनुभवों का संक्षिप्त में वर्णन किया है और मेरे कुछ पुस्तकों में भी किया है। तथापि यहाँ पर कुछ बिन्दुवार वर्णन कर रहा हूँ।

1) सत्य एवं धर्म :- अधिकांश व्यक्ति सार्वभौम , शाश्वतिक, परमसत्य को न जानते हैं, न जानना चाहते हैं । इसी प्रकार धर्म के जो शाश्वतिक, सार्वभौम तथ्य यथा - सत्य, समता, उदारता, सहिष्णुता, परदु:ख कातरता, व्यापकता, परोपकारिता, विश्वबंधुत्व, विश्वप्रेम, आध्यात्मिकता, भाव की पवित्रता, सहज-सरलता को न जानते हैं, न जानना चाहते हैं, न प्रयोग में लाना चाहते हैं। केवल कुछ बाह्य धार्मिक क्रियाकाण्ड, रीतिरिवाज, परम्परा, त्याग-तपस्या, पूजा-पाठ, पर्व-त्यौहार, रस त्याग, उपवास, हरी त्याग, भोजन त्याग आदि को ही अधिक महत्व देते हैं और इसके कठोरता से पालन से ही धर्म का पालन हुआ ऐसा मान लेते हैं। इन सब बाह्य क्रियाकाण्डों का पालन उपर्युक्त यथार्थ धर्म के लिए सहकारी है तो साधक है नहीं तो यह सब बाधक है, घातक है, विध्वसंक है। क्योंकि उपर्युक्त यथार्थ धर्म के बिना इन बाह्य क्रियाकाण्डों से शारीरिक क्षति के साथ साथ मानसिक विकृतियाँ यथा - अहंकार, ईर्ष्या, धार्मिक कट्टरता, भेदभाव, आडम्बर, फिजुलखर्ची, शब्द प्रदूषण, वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, सामाजिक प्रदूषण आदि पनपते हैं।

2) शिक्षा :- लौकिक या धार्मिक पढाई भी अधिकांश व्यक्ति केवल डिग्री, प्रसिद्धि, नौकरी, स्वार्थसिद्धि, सत्ता, संपत्ति, अहं वृद्धि के लिए करते हैं। शिक्षा का तो उद्देश्य सर्वाङ्ग विकास, विनम्रता,

उत्पादकता, शालीनता, कर्तव्यनिष्ठा, अनुशासन प्रियता, उदारता, वैज्ञानिकता, प्रगतिशीलता, समयोचित समायोजना, सादा जीवन उच्च विचार, परोपकारिता, गुणवत्ता आदि हैं। उसे न प्राप्त करते हैं, न बढाते हैं परंतु विकृत करते हैं, उसे घटाते हैं, उसे नष्ट करते हैं। पहले भारत में ज्ञान (विद्या) दान होता था फिर विद्या का व्यापार हुआ अभी तो विद्या के माध्यम से शोषण चल रहा है।

3)संगठन :- अधिकांश सामाजिक, राजनैतिक, संस्थागत यहाँ तक कि धार्मिक पदाधिकारी/कार्यकर्ता सेवा, परोपकार के लिए कम कार्य करते हैं परंतु स्वार्थ, प्रसिद्धि, सत्ता, संम्पत्ति, अहंवृद्धि, ईर्ष्या प्रवृत्ति एवं दूसरों को नीचा दिखाने के लिए या क्षति पहुँचाने के लिए कार्य करते हैं। विभिन्न संगठन भी एकता, अखण्डता के लिए कम कार्य करते हैं परंतु विघटन एवं विद्वेष के लिए ज्यादा कार्य करते हैं भले वह संगठन सामाजिक से लेकर राजनैतिक, धार्मिक भी क्यों न हो।

4) समाज :- जहाँ पर व्यक्ति परस्पर सहयोग करते हुए सम्मिलित होकर निवास करते हैं उसे समाज कहते हैं। समाज में बडों के प्रति आदर, छोटों के प्रति प्रेम, गरीब, असहाय के प्रति सहयोग का भाव होना जरुरी है। परंतु समाज में जिसके पास सत्ता, संपत्ति, बाहुबल, धनबल है उसे ही महत्व दिया जाता है भले वह अन्याय, अत्याचार, पापाचार, भ्रष्टाचार, शोषण, व्यसन, फैशन में लिप्त क्यों न हो। समाज में सादा जीवन उच्च विचार वाले सरल-सहज, विनम्र व्यक्तियों को कम महत्व मिलता है।

5) भारत :- भारत में राष्ट्रीयता, स्वच्छता, समयानुबद्धता, अनुशासन, कर्तव्यनिष्ठा, प्रामानिकता, स्व-संस्कृति, भाषा, परम्परा, महापुरुष आदि के प्रति गौरव भाव कम पाया जाता है। नेता, अभिनेता (नट-नटी, हीरो-हीरोइन), खलनेता (कुख्यात व्यक्ति), खेलनेता आदि को अति महत्व मिलता है परंतु सज्जन, गुणीजन, ज्ञानीजन, सेवाभावी, कृषक, श्रमिक, वैज्ञानिक, चिन्तक, साधु-सन्त, आदर्श पुरुष यहाँ तक कि माता-पिता एवं गुरुजनों को भी कम महत्व मिलता है। भारतीय ज्ञान-विज्ञान, साहित्य, सिद्धान्त, गणित, आयुर्वेद, भोजन, खेल, नृत्य, संगीत, कला, चित्र आदि को भी कम महत्व दिया जात है। अधिकांश भारत के लोग अकल के बिना विदेशियों का या नट-नटियों का नकल करते हैं मानो जैसा कि मदारी बंदर को नचा रहा है या कठपुतली को सूत्रकार नचा रहा है।

मधुर अनुभव :- अभी भी भारत में सर्वत्र, सम्पूर्ण जाति, पंथ, परम्परा, विभाग, ग्राम, नगर, शिक्षित, अशिक्षित, धनी, गरीब, संगठन, राजनैतिक दलों में भी अच्छे व्यक्ति पाये जाते हैं भले उनकी संख्या कम क्यों न हो। कुछ अशिक्षित, ग्रामीण व्यक्तियों में धार्मिक, सामाजिक कुरितियाँ होने पर भी उनमें सरलता, सहजता, उदारता, सेवाभाव, विनम्रता, गुरुभक्ति, गुरुसेवा, अतिथिसेवा, श्रमशीलता आदि गुण पाये जाते हैं। धनी, शिक्षित, नगर के व्यक्तियों में फैशन-व्सन, आडम्बर, दिखावा आदि दुर्गुण होने पर भी उनमें धार्मिक, सामाजिक कुरितियाँ कम पायी जाती हैं भले उनमें भी कुछ में शादी-विवाहादि में आडम्बर प्रियता, अतिव्यय बढ रहा है। कुछ पुरानी पीढी वाले रुढीवादी होने पर भी उनमें आधुनिक अंधानुकरण कम है। आधुनिक पीढी में फैशन-व्यसनादि दोष होने पर भी उनमें उदारता, प्रगतिशीलता, सहिष्णुता आदि गुण पाये जाते हैं। अनेक धार्मिक परम्परा, पर्व-त्यौहार आदि से अंधविश्वास, फिजुलखर्च होने पर भी उससे इतिहास, परम्परा, संस्कृति जीवित रहती है। तीर्थ यात्रा, तीर्थ आदि से फिजूलखर्च, गुण्डागर्दी, शोषण, अव्यवस्था होने पर भी इससे राष्ट्र का भ्रमण, विभिन्न भाषा व संस्कृति का परिज्ञान, ऐतिहासिक ज्ञान, मनोरंजन आदि होता है। विज्ञान के कारण शब्द प्रदूषण, वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, टी. वी. सिनेमादि के कारण सांस्कृतिक प्रदूषणादि होने पर भी अंधविश्वास, संकीर्णता, कट्टरता आदि घट रहे हैं, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प, बाढ, महामारी, आदि से कुछ राहत मिल रही है। वैज्ञानिक विकास के साथ साथ यथार्थ धर्म, संस्कृति, परम्परा, भाव, व्यवहार का महत्व बढ रहा है तो अयथार्थ धर्म, परम्परादि का महत्व घट रहा है। उच्च वैज्ञानिक ज्ञान, विचार से सम्पन्न व्यक्ति धार्मिक अधिक बनते जा रहे हैं। धर्म को, सत्य-तथ्य को, घटनाओं को समझने, समझाने, लिखने की पद्धति वैज्ञानिक होती जा रही है। इस पद्धति से समझना, समझाना, स्वीकार करना एवं प्रायोगिक करना सरल होता जा रहा है। इससे दूसरे धर्म, जाति, राष्ट्र, परम्परा में निहित सत्य-तथ्य तथा उपकारी विषयों को गुणग्राही अन्य धर्मादि के लोग स्वीकार करते जा रहे हैं। यथा - योग (ध्यान), अहिंसा, शाकाहार, परोपकार, पर्यावरण सुरक्षा, सेवा, शांति, अच्छे भाव, सरलता-सहजता, सादा जीवन उच्च विचार, विश्व बंधुत्व, विश्व शांति आदि आदि।

A) मेरी भावना :- मेरी भावना है विश्व के प्रत्येक प्राणी सत्य, अहिंसा, सदाचार, सहअस्तित्व के माध्यम से परम शाश्वतिक शांति

को प्राप्त करें। मैं स्वयं इसके लिए आदर्श बनूँ। मेरी भावना है कि मैं किसी भी कारण से, किसी भी परिस्थिति में, किसी भी प्रकार के निन्दा-प्रशंसा, दबाव, प्रलोभन से सत्य, समता, न्याय, शांति से विचलित न होऊँ। यह ही मेरा धर्म, लक्ष्य, साधन, साध्य, प्राप्य, भगवान्, मोक्ष एवं सर्वस्व है।

B) मेरी रुची :- मेरी रुची सत्य को जानना, समता में रहना एवं शांति को प्राप्त करना है। I) इसकेअनुकूल अध्ययन, अध्यापन, चिन्तन, चर्चा, चर्या, प्रायोगिकरण, ध्यान, अनुभव, स्थिरता, लीनता। II) सरल-सहज, उदार, शांत, परोपकारी व्यक्ति (स्त्री, पुरुष, युवक, युवती, बालक, बालिकायें)। III) एकान्त, प्रशांत, स्वच्छ, प्रदूषण रहित, शीतल वातावरण, निवासस्थान, ध्यान-अध्ययन-अध्यापन स्थान, आहार-विहार-निहार स्थान। IV) ताजा, स्वच्छ, पौष्टिक, सुस्वाद, सुगंधित, सुन्दर शीतल, मधुर भोजन पानी। यथा - गरम किया हुआ गाय का ठंडा दूध, गाय का घी, दूध-घी से बनी हुई वस्तु यथा - पूडी, पराठा, रसगुल्ला, हलुआ, गुलाबजामुन, जलेबी, मूंग की दाल, हरी सब्जी (कच्चे केले, तरी ककडी, लौकी, परबल, टिण्डसी, पालक, हरा धनियाँ, शिमला मिर्ची), मीठे फल (केले, अंगुर, आम, चीकू, सेब), मेवा (मनुक्का, बादाम, पिण्ड खजूर, चिलगोजा) चावल, खीर, नारियल का पानी, थंडाई आदि। V) बच्चों को पढाना उनसे अहार लेना। VI) दूसरों की विशेषत: साधु-संत, गरीब, रोगी, पशु-पक्षी आदि की सेवा (उपकार) करना। VII) साधु-संत, वैज्ञानिक आदि को गहन विषयों को पढाना, उनसे पढना, चर्चा करना। VIII) शोधपूर्ण गहन विषयों का अध्ययन करना, लेख-साहित्य का लेखन करना। IX) धर्म दर्शन विज्ञान प्रशिक्षण शिविर में पढाना। X) वैज्ञानिक संगोष्ठी, कार्यशालाओं का आयोजन। XI) व्यसन-फैशन, भ्रष्टाचार, फूट, असंगठन, अनैतिकता, हिंसा, बुचडखाना, अश्लीलता आदि को दूर करके संस्कार, सदाचार, समन्वय, संगठन, उदारता, शांति की स्थापना करना। XII) देश-विदेश में सामान्य जनता से लेकर स्कूल, कॉलेज, विश्व विद्यालय, विज्ञान, शिक्षा केंद्र, न्यायालय, राजनीति, संविधान आदि में सत्य, समता पूर्ण वैज्ञानिक, आध्यात्मिक धर्म का प्रचार-प्रसार, स्थापना करना आदि आदि।

C) मेरी साधना :- मेरी साधना है सत्यनिष्ठा, सत्यग्राही, समता, सरल-सहजता, सादा जीवन उच्च विचार, कर्तव्यनिष्ठा, अनुशासन, समयानुबद्धता, प्रामाणिकता, परीक्षा प्रधान, सत्‌विश्वास, सदाचार, परोपकार, स्वाध्याय, अध्यापन, मनन, चिंतन, अनुभव, प्रयोग धर्मिता, सहिष्णुता, सत्‌साहस, परिशोधन, प्रगतिशीलता, नम्रता, शालीनता, उदारता, व्यापकता, एकता, स्व-पर-विश्व शांति, विश्वबंधुत्व, शोध-बोध, लेखन, प्रवचन आदि आदि।

D) मेरे लिए अयोग्य :- I) उपर्युक्त भावना एवं रुचि के विपरीत भावना, स्थान, कार्य, व्यक्ति, भोजन आदि मेरे लिए अयोग्य है। यथा - संकीर्णता, कूट-कपट, आडम्बर, मिथ्या, दंभ, लडाई, झगडा,तनाव तथा इन से युक्त व्यक्ति मेरे लिए अयोग्य हैं। II) गरमी, प्रदूषण, गन्दगी, मच्छर (क्योंकि मच्छर मुझे अधिक काटते हैं), दुर्गंध, भीड, शोर-शराबा से युक्त वातावरण, स्थान या निवास मेरे लिए अयोग्य है। III) गरम स्पर्श या प्रकृति से युक्त भोजन, मिर्ची, खट्टी चीज, बांसी, दुर्गंधित, बेस्वाद, नीरस, अधिक नमक या मीठा, तेल, मटर, बेसन, मक्का, दही, उडद, अधकच्चा-अधपक्का-अधजला-रुखा-सूखा भोजन, गवांर फली, सेंगरी, बाटी, लाडु, चुरमा आदि अयोग्य है। योग्य भोजन भी अक्रम, अव्यवस्थित अथवा अशांति या अच्छी भावना से रहित होकर देना भी अयोग्य है। क्योंकि मेरी विदग्ध अम्लपित्त (एसिडिटी) तथा अत्याधिक शारीरिक गर्मी की समस्या होने से इससे उल्टी हो जाती है, विभिन्न शारीरिक, मानसिक समस्यायें हो जाती हैं। इसलिए गरमी, धूप में चलना, रहना भी अयोग्य है। अनेक बार तो इन सब कारणों से हैजा, पीलिया, भयंकर उल्टी, चक्कर आदि रोग हो गये हैं। इसलिए इस संबंधी सावधानी अत्यन्त आवश्यक है। किसी भी विषय को बार बार बोलना या सुनना भी मेरे योग्य नहीं है। तुच्छता, अनुशासन हीनता, असमयानुबद्धता, संकीर्णता, अव्यवस्था, मतवाद, पंथवाद, सडी-गली रीति-रिवाज-लेख-पुस्तक-चर्चा-चिंतन-लेखन-प्रवचन भी मेरे योग्य नहीं है।

ख्याति, पूजा, प्रसिद्धि, लोकेष्णा, वित्तेष्णा, भौतिक लाभ, लौकिक सुख के लिए मेरी न कोई भावना, न रुचि है। इसलिए मुझे जो विभिन्न उपाधियाँ दी गई हैं उसके प्रति मेरी न कोई आसक्ति है न मैं उसे प्रयोग में लाता हूँ। अनिच्छा पूर्वक स्वयं प्राप्त ख्याति, पूजा, प्रसिद्धि, उपाधियाँ आनुसांगिक/सह-उत्पादक/स्वाभाविक है। मेरे लक्ष्य, साधना, अनुभव, शांति, ज्ञानादि में यह सब सहयोगी/साधक बने बाधक नहीं यह भी मेरी भावना है।

'सर्वेऽपि सुखी भवन्तु।' 'वन्दे तद्गुण लब्धये।'
'ॐ ह्रीं सत्यसाम्यसुखाय नमो नम:।'

आचार्य कनकनंदी
उदयपुर राजस्थान 1-7-05 (रात्री 12.30)